मेष लग्न

मेषलग्ने तु जातस्य राजयोगीऽपि लभ्यते ।
चतुर्थ पञ्चमाधीश संबन्धेन न संशयः ॥ १ ॥

भावार्थ - मेष लग्न में जन्म लेने वालों की जन्म कुण्डली में यदि चतुर्थ और पंचम भाव के स्वामियों का परस्पर (दृष्टि योग आदि) संबंध हो, तो जातक को निश्चय ही राजयोग की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या - राजयोग से तात्पर्य धनी होना और दूसरों पर अधिकार की प्राप्ति है । पाराशरीय नियमों के अनुसार केन्द्र और त्रिकोण के स्वामियों का पारस्परिक संबंध राजयोग देता है। यहाँ चन्द्र केंद्रेश और सूर्य त्रिकोणेश होने से उनका पारस्परिक सम्बन्ध राजयोग उत्पन्न करेगा ।

हाँ, इतना अवश्य है कि चन्द्र अपनी दशा भुक्ति में उतना अच्छा फल नहीं देगा, जितना कि सूर्य । कारण यह कि सूर्य के सान्निध्य से ग्रहों का बल क्षीण हो जाता है ।

मेषलग्ने तु जातस्य धनसप्तमनायकः ।
शुक्रः करोति निधनमिति ज्योतिषकाविदुः ॥ २ ॥

भावार्थ - इस लग्न वालों के लिये शुक्र (अपनी दशा भुक्ति में) मृत्यु लाता है, क्योंकि वह द्वितीयेश और सप्तमेश है ।

व्याख्या - अष्टम और अष्टम से अष्टम अर्थात् तृतीय दो भाव आयु के हैं । इनसे बारहवें अर्थात् दूसरा और सातवाँ 'मारक भाव कहलाता है, इसलिए द्वितीयेश और सप्तमेश शुक्र अपनी दशा भुक्ति मे मारक सिद्ध

होता है, परन्तु यह कोई आवश्यकं नहीं कि प्रत्येक द्वितीयेश तथा सप्तमेश मारक सिद्ध हो।

मेषलग्ने तु जातस्य भाग्यान्त्यस्थान नायकः ।
देवेन्द्रपूज्यो राज्यस्थ सभवेन्मारकः स्मृतः ॥ ३ ॥

भावार्थ – नवमेश और द्वादशेश होकर गुरु यदि दशम भाव में स्थित हो, तो मृत्यु का खण्ड आने पर गुरु मारक सिद्ध हो सकता है ।

व्याख्या – गुरु ने मुख्यतया नवम भाव का फल करना है, अतः साधारणतया गुरु मारक सिद्ध न होगा । हाँ, यदि मृत्यु का खण्ड आ जाये, तो फिर द्वादशेश होकर नीच होने के कारण मारक सिद्ध हो सकता है ।

मेष लग्ने तु जातस्य राजयोगो न लभ्यते ।
भाग्यराज्येश संबंध मात्रेण हि न संशयः ॥ ४ ॥

भावार्थ – मेष लग्न वालों के गुरु नवमेश और शनि दशमेश में यदि पारस्परिक दृष्टि आदि सम्बन्ध हो, तो इस सम्बन्ध मात्र से राजयोग की प्राप्ति नहीं होती ।

व्याख्या – महर्षि पाराशर ने अपने होरा शास्त्र में यह स्पष्ट किया हुआ है कि त्रिकोणेश से केन्द्रेश का संबंध तभी योगदायक होता है जबकि केन्द्रेश पापी न हो।

यहाँ शनि एक नैसर्गिक पापी ग्रह होता हुआ केन्द्रेश है, इसलिए अपने नैसर्गिक पापत्व को खो देता है, परन्तु चूँकि पुनः वह एकादशेश भी है, इसलिए वह अन्तिम परिणाम में पापी रहता है और इसी कारण से उसका गुरु से सम्बन्ध योगप्रद सिद्ध नहीं होता । पाराशर ने एकादशेश को पापी ग्रह माना ही है ।

मेषलग्ने तु जातस्य स्फोट शस्त्रव्रणादिनम् ।
भयमस्ति च जगुः प्रायशो गणिकोत्तमाः ॥ ५ ॥

भावार्थ - उत्तम ज्योतिषियों का कहना है कि मेष लग्न में उत्पन्न होने वालों का शस्त्र, चोट, फोड़े आदि से पीड़ित होने का भय रहता है ।

व्याख्या - मंगल चोट आदि का कारक है । उसका लग्न से सम्बन्ध चोट आदि दे सकता है, बल्कि मंगल लग्नेश और अष्टमेश दोनों होने से मृत्यु का कारण भी बन सकता है। विशेषतया जबकि केतु का प्रभाव भी लग्न तथा अष्टम पर हो।

षष्ठभाष्टमनाथेन युतो भूमिसुतो यदि ।

तद्दशान्तर्दशाकाले निधनम् मूनि कृन्तनम् ॥ ६॥

भावार्थ - यदि मंगल षष्ठेश से युक्त हो, तो षष्ठेश की दशा अथवा भुक्ति में सिर पर चोट आने से मृत्यु हो ।

व्याख्या - हम समझते हैं कि पाठ में षष्टभाष्टम नाथेन के स्थान पर ' षष्ट भावस्य नाथेन' पाठ होना चाहिए, क्योंकि मंगल का अष्टमेश से युति का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता । वह स्वयम् अष्टमेश है । षष्ठेश की दशा मुक्ति का अर्थ होगा कि रोग और चोट स्थान का स्वामी लग्नेश और अष्टमेश मंगल को पीड़ित करेगा ।

लग्नेश और अष्टमेश का पीड़ित होना मृत्युदायक होता ही है । कष्ट सिर में होगा, क्योंकि पीड़ित ग्रह मंगल की मूल त्रिकोण राशि लग्न (सिर) में स्थित है ।

मेषे जातस्य धनपो व्ययस्थोऽपि कविश्शुभः ।

इतर तु जातस्य व्ययस्थ घनपोऽशुभः ॥ ७ ॥

भावार्थ - मेष लग्न वालों के लिए द्वितीयेश शुक्र द्वादश स्थान में स्थित शुभ फल करता है, परंतु अन्य किसी लग्न का द्वितीयेश द्वादश में अशुभ फल देता है।

व्याख्या - ग्रन्थकार ने अध्याय १२ के श्लोक ४ में यह साधारण नियम स्वीकार किया है कि शुक्र की द्वादश भाव में स्थिति धन सम्बन्धित

शुभ फलप्रद है, अतः उपरोक्त श्लोक में कन्या लग्न के द्वितीयेश शुक्र को भी सम्मिलित कर लेना चाहिए। वह भी द्वादश में शुभ फल करेगा । हाँ, साधारण नियम यही है कि जिस भाव का स्वामी द्वादश भाव में स्थित होगा, उसको हानि पहुँचेगी ।

मेषे जातस्य भौमस्तु शुक्रेण सहितो यदि ।

योगदो भविता भूयो मारकोऽपि भवेदसौ ॥ ८ ॥

भावार्थ – यदि मेष लग्न हो और मंगल शुक्र की युति हो, तो मंगल योग कारक और मारक दोनों रूप से फल करता है ।

व्याख्या – नियम है कि कोई भी ग्रह मारकेश के साथ यदि स्थित होगा, तो मारक रूप से कार्य करेगा । यहाँ मंगल मारकेश शुक्र के साथ है, इसलिए उसने अपनी दशा भुक्ति में शुक्र को मारकत्व का फल देना है, चूँकि शुक्र और मंगल की युति केन्द्रेश और कोणेश की युति है, यह युति शुभ फल भी देगी।

शुभ फल का एक कारण यह भी है कि यह युति लग्नेश और धनेश की युति होगी, जोकि नियमाध्याय के नियम १० अनुसार शुभ फलप्रद है ।

मेषे जातस्य भौमस्तु गुरुशुक्रसमन्वितः ।

द्वितीये यदि विद्येत योगदो भवति ध्रुवम् ॥

भावार्थ – यदि द्वितीय स्थान में वृषभ राशि में मंगल, गुरु, शुक्र स्थित हों, तो यह योग शुभ धनादिदायक होता है ।

व्याख्या – मंगल लग्नेश रूप से, गुरु भाग्येश रूप से, शुक्र धनेश रूप से धन के प्रतिनिधि हैं, इसलिए उन सबका एकत्र होना और वह भी धन स्थान में, धनदायक सिद्ध होगा ही ।

मेषे जातस्य भौमस्तु गुरुशुक्रसमन्वितः ।

तृतीयस्थो यदि भवेन्नैव योगप्रदो भवेत् ॥ १० ॥

भावार्थ - यदि मंगल, गुरु और शुक्र के साथ तृतीय भाव में मिथुन राशि में स्थित हो, तो वह योगप्रद नहीं होता ।

व्याख्या - मंगल अपनी मेष राशि से तृतीय और वृश्चिक से अष्टम होगा । तृतीय और अष्टम दोनों स्थितियाँ अशुभ हैं, अतः मंगल अशुभ फलदाता होगा। परन्तु चूँकि गुरु और शुक्र से युक्त है, कुछ शुभ फल करेगा। जो भी हो, योगप्रद न हो पावेगा ।

मेषे जातस्य भौमस्तु गुरुणा च समन्वितः ।

चतुर्थस्थो यदि भवेद्योगदो भवति ध्रुवम् ॥ ११ ॥

भावार्थ - मगंल चतुर्थ भाव में कर्क राशि में गुरु युक्त हो, तो बहुत शुभ फल करता है ।

व्याख्या - कर्क का मगंल मेष से चतुर्थ और वृश्चिक से नवम होता है । चतुर्थ और नवम दोनों स्थितियाँ शुभ हैं, अतः मंगल नोच राशि में होता हुआ भी बहुत अच्छा फल करेगा । अपने मित्र और अच्छे शुभ भाग्येश के साथ होकर और भी शुभ फलप्रद होगा ।

मेषे जातस्य हि कुजः पञ्चमस्थो भवेद्यदि ।

कुजदाये च संप्राप्ते योगवश्च भवेध्रुवम् ॥ १२॥

भावार्थ - यदि मंगल पंचम भाव में सिंह राशि में हो, तो अपनी दशा भुक्ति में योगफल अर्थात् धनादि देता है ।

व्याख्या - इस स्थिति में मंगल दो कारणों से शुभ फलदायक होता है । एक तो इसलिये कि वह मेष से पंचम और वृश्चिक से दशम दो शुभ स्थानों में स्थित होता है; दूसरे चूँकि इसकी दृष्टि अपनी राशि

वृश्चिक पर पड़ती है इस दृष्टि से अष्टम और लग्न (धन-बल, आदि, दोनों को बल मिलता है, जिससे शुभ फल की प्राप्ति होती है ।

मेषे जातस्य हि गुरुर्लाभस्थान स्थिवे भवेत् ।
गुराईशायाम् संप्राप्तावययोगो भवेध्रुवम् ॥ १३ ॥

भावार्थ - कुम्भ राशि का लाभ स्थान में स्थित गुरु अपनी दशा में बुरा फल करता है ।

व्याख्या - यहाँ गुरु इसलिए अशुभ फल दे रहा है कि यह अपनी धनु राशि से तृतीय और मीन से द्वादश अर्थात् दोनों बुरे स्थानों में स्थित है।

इस प्रकार आप देखेंगे कि अपनी राशियों से अच्छी अथवा बुरी स्थिति का फल कितना दूसरे फलों को हटाकर अपना फल करता है ।

साधारण नियमों के अनुसार किसी भी ग्रह का एकादश स्थान में स्थित होना उसके लिए बलप्रद होता है, परन्तु जब वह अपनी राशियों से अनिष्ट स्थानों में हो, तो उसकी एकादश भाव में स्थिति तक का फल जाता रहता है।

मेषे जातस्य षष्ठे तु बुधभौमौ स्थितौ यदि ।
तयोर्दशायां संप्राप्तौ व्रणस्फोटादि रोगदौ ॥ १४ ॥

भावार्थ - यदि मंगल और बुध कन्या राशि में छठे भाव में हों, तो अपनी-अपनी दशा भुक्ति में फोड़े, फुंसी आदि रोगों को जन्म देते हैं ।

व्याख्या - यहाँ भी सादृश्य का सिद्धान्त काम करता है। मंगल घाव आदि का द्योतक है, छठा भाव और षष्ट्रेश भी घाव आदि के द्योतक हैं; इसलिए षष्ट्रेश का मंगल सहित लग्न से छठे भाव में बैठना छठे भाव प्रदर्शित घाव आदि की सृष्टि करेगा, जिसका फल बुध और मंगल दोनों एक जैसा करेंगे ।

मेषे जातस्य भौमोऽपि सप्तमे संस्थितः कविः ।

स्वाजितं भाग्यमाप्नोति किंचिद्धनमुदीरितम् ॥ १५ ॥

भावार्थ - यदि मंगल और शुक्र तुला राशि में सप्तम भाव में स्थित हों, तो जातक अपने पुरुषार्थ से धन कमाता है और कुछ धनी भी होता है ।

व्याख्या - नियमाध्याय के नियम संख्या १० अनुसार मंगल जो एक महान् राजसिक और क्रियाशील ग्रह है, उत्साह और वीर्य (सप्तम) स्थान में पड़कर वीर्य कारक शुक्र से युक्त है, इसलिए यहाँ वीर्य और उत्साह के साँझे गुण की सृष्टि हो रही है। इसके अतिरिक्त मंगल चूँकि निज राशि मेष को देखेगा वह लग्न के धन, यश आदि शुभ गुणों की वृद्धि करेगा ।

मेषे जातस्य भौमस्तु अष्टमस्थो न योगदः ।

रविशुक्र समायुक्तः स्वल्पदश्च भविष्यति ॥ १६ ॥

भावार्थ - मेष लग्न वालों का लग्नेश मंगल यदि अष्टम स्थान में हो, तो अच्छा फल नहीं देता । हाँ, यदि सूर्य और शुक्र से युक्त होकर अष्टम स्थान में स्थित हो, तो थोड़ा अच्छा फल करता है ।

व्याख्या - नियमाध्याय के नियम संख्या १३ के अनुसार मंगल की मूल त्रिकोण राशि लग्न में पड़ती है, इसलिए मंगल ने लग्न का फल करना है। अब चूँकि मंगल निज स्थान (लग्न) से अष्टम में है, यह लग्न के फल को नाश करने वाला होगा।

सूर्य और शुक्र की युति द्वारा मंगल अष्टम में रहता हुआ भी कुछ शुभ फल दे देगा, क्योंकि सूर्य पंचमेश होकर शुभ है और शुक्र धनेश होकर शुभ है ।

भाग्यस्थौ रविभौमौ च गुरुशुक्रौ तथैव च ।

सप्तमस्थो यदि शनिः भौमो योगविशेषदः ॥ १७ ॥

भावार्थ - यदि नवम स्थान में धनु राशि में सूर्य, मंगल, गुरु और शुक्र स्थित हो और शनि सप्तम में हो, तो मंगल विशेष रूप से शुभ फल देने वाला होता है।

व्याख्या - सूर्य पंचमेश होकर, मंगल लग्नेश होकर, गुरु शुभ भाग्येश होकर और शुक्र धनेश होकर सभी ग्रह धनदायक हैं, अतः मंगल जो स्वयं भी लग्न से तथा वृश्चिक राशि से स्थिति में होगा । इन धनदायक ग्रहों से युक्त होकर इनका भी शुभ फल करेगा जिसके फलस्वरूप विशेष शुभ फल की प्राप्ति होगी ।

शनि की मंगल पर दृष्टि भी शुभ ही सिद्ध होगी, क्योंकि शनि ने लाभ भाव का धनप्रद फल करना है, कारण कि उसकी मूल त्रिकोण राशि एकादश (लाभ) भाव में पड़ती है ।

मेषलग्ने तु जातस्य लग्ने रविभृगू यदि ।

गुरुणा वीक्षितौ नोचेत्छुको योगप्रदो भवेत् ॥ १८ ॥

भावार्थ - यदि मेष लग्न में सूर्य और शुक्र हों और गुरु की दृष्टि उन पर न हो, तो शुक्र अपनी दशा भुक्ति में शुभ फल देता है ।

व्याख्या - यदि शुक्र इसलिए शुभ फलदायक है कि वह केन्द्राधिपत्य दोष से दूषित होकर पापी बनकर पाप ग्रह सूर्य द्वारा पीड़ित है और इसलिए विपरीत राजयोगकारी बनता हैं तब तो गुरु का शुक्र को न देखना ही अच्छा है, क्योंकि गुरु की दृष्टि से शुक्र शुभता की ओर जावेगा और इसलिए विपरीत राजयोग भंग हो जावेगा और यदि शुक्र इसलिए शुभ फल करता है कि सूर्य भी पंचमेश होकर धन द्योतक है और शुक्र भी धनेश होकर धन द्योतक है, तो फिर गुरु की दृष्टि का न होना असंगत होगा, क्योंकि गुरु धनकारक है और भाग्येश है, अतः बहुत शुभ है और हम नहीं चाहते कि शुभ दृष्टि से पापी शुक्र को बल मिले ।

गुरुणा वीक्षितश्शुको योगदो न भवेध्रुवम् ।

गुरुणा वीक्षितस्सूर्यो योगदो भवति ध्रुवम् ॥

गत १८ सं० श्लोक की स्थिति में गुरु को दृष्टि यदि सूर्य और शुक्र दोनों पर हो, तो शुक्र अपनी दशा भुक्ति में शुभ फल न देगा, परन्तु सूर्य अपनी दशा भुक्ति में शुभ फल देगा। (गत श्लोक पर व्याख्या देखिये) ।

सूर्य पंचमेश शुभ है और भाग्येश धनेश से प्रभावित होकर और भी शुभ हो जावेगा ।

मेषलग्ने तु जातस्य रविसौम्य सितास्तथा ।

लाभस्था यदि तेषां च दशाभाग्यप्रदा स्मृता ॥ २० ॥

भावार्थ - यदि एकादश भाव में कुंभ राशि में सूर्य बुध और शुक्र हों, तो ये ग्रह अपनी-अपनी दशा भुक्ति में धनादि के सम्बन्ध में शुभ फल करने वाले होंगे ।

व्याख्या - सूर्य पंचम त्रिकोण का स्वामी होकर शुभ धनप्रद ग्रह है और शुक्र धनेश होकर धनप्रद है । दोनों धनप्रद ग्रहों का एक धनप्रद भाव (एकादश) में बैठना और भी अधिक धनप्रद सिद्ध होगा। रह गई बात बुध की, सो उसकी तो प्रकृति ही ऐसी है कि वह जैसे ग्रहों के साथ होता है वैसा ही फल करता है। इसलिए धनप्रद सूर्य और शुक्र के साथ बैठकर बुध भी धनप्रद ही सिद्ध होगा ।

मेषे जातस्य लग्नस्थो भानु कर्कटके यदि ।

चन्द्रो यदि भवेज्जातः राजयोगम् समश्नुते ॥ २१ ॥

भावार्थ - यदि मेष लग्न वालों का सूर्य लग्न में और चन्द्र चतुर्थ भाव में स्थित हो, तो जातक को राजयोग की प्राप्ति होती है।

व्याख्या - सूर्य त्रिकोणेश होकर केन्द्र में उच्च राशि में स्थित होकर शुभ फल करेगा और चन्द्रमा निज राशि में चतुर्थ केन्द्र में स्थित होकर

और पक्ष बल में भी कुछ बली होकर शुभ फल करेगा । परस्पर केन्द्र में होने के कारण और केन्द्रेश चन्द्र पर कोणेश सूर्य का केन्द्रीय प्रभाव होने के कारण भी सूर्य और चन्द्र शुभ फल करेंगे ।

मेषलग्ने तु जातस्य शुक्रेज्यार्यम्णो यदि ।

राज्यस्थास्तद्दशाकाले गंगास्नानम् भविष्यति ॥ २२ ॥

भावार्थ - शुक्र, सूर्य और गुरु यदि मकर राशि में दशम स्थान में स्थित हों, तो वे अपनी-अपनी दशा भुक्ति में गंगा स्नान देते हैं ।

व्याख्या - दशम स्थान धर्म-कर्म का स्थान है जिसमें गंगा आदि की तीर्थ यात्रा सम्मिलित हैं । सूर्य और गुरु भी सात्विक और धार्मिक ग्रह हैं, इसलिए इन ग्रहों की दशम भाव में स्थिति गंगा स्नान आदि धार्मिक कृत्य देती है।

उधर शुक्र की मूल त्रिकोण राशि सप्तम भाव में पड़ती है जो दशम से दशम होते. के कारण दशम की भाँति ही धर्मप्रद है, अतः सप्तमेश शुक्र भी अपनी दशम स्थिति द्वारा गंगा स्नान आदि की प्राप्ति में सहायक होगा ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

वृषभ लग्न

वृषभजातस्य च शनिः भाग्यकर्मेश्वरोऽपि वा ।
सोमसुताभ्याम् वा न युक्रतौ नैव योगदः ॥ १ ॥

भावार्थ - वृषभ लग्न में जन्म हो, तो शनि केन्द्र (दशम) तथा त्रिकोण (नवम) का स्वामी होता हुआ भी योग (बहुत शुभ) फल नहीं दे सकता, यदि इसके साथ सूर्य तथा बुध की युति न हो।

व्याख्या – शनि के बहुत शुभ फल न देने का कारण संभवतया यह है कि उसकी मूल त्रिकोण राशि दशम भाव में पड़ती है। यह केन्द्रेश होकर अशुभ नहीं रहता अर्थात् थोड़ा शुभ होता है । शनि चूँकि ग्रहों में निम्नतम श्रेणी का है, इसलिए इसका नवमेश होना इसको अधिक

शुभ नहीं बना सकता, इसलिए इसकी शुभता को बढ़ाने के लिए इसके साथ दूसरे योगकारक ग्रहों का संसर्ग आवश्यक है ।

सूर्य केन्द्रेश और बुध कोणेश मिलकर राजयोग की सृष्टि करते हैं, इसलिए उनका शनि से योग शनि में अधिक शुभता लाता है। स्वतंत्र रूप से शनि अपनी दशा भुक्ति में शुभ फल तो करेगा, परन्तु उत्तम फल न कर सकेगा ।

वृषभर्क्षेऽपि जातस्य राज्येराहुर्यदि स्थितः ।

मकरे गुरुभौमौ वा गंगास्नानम् समश्नुते ॥ २ ॥

भावार्थ - यदि दशम भाव में कुंभ राशि में राहु स्थित हो अथवा नवम भाव में मकर राशि में गुरु तथा मंगल स्थित हों, तो मनुष्य गंगा स्नान का भागी होता है ।

व्याख्या – राहु एक छाया ग्रह है। इसका स्वतन्त्र फल नहीं होता, इसलिए यदि इस पर दृष्टि अथवा युति द्वारा कोई प्रभाव नहीं, तो यह दशम भाव से प्रभावित होकर दशम भाव ही का फल करेगा । दशम भाव चूँकि धर्म–कर्म आदि यज्ञीय कृत्यों का भाव है, राहु गंगा स्नान आदि धार्मिक कृत्य देगा ।

उधर नवम स्थान भी धर्म स्थान है, अतः वहाँ उच्च मंगल की स्थिति विशेषतया एक धार्मिक ग्रह गुरु के साथ होकर धर्म उत्कृष्टता लावेगी जिससे तीर्थादि में गंगा स्नान भी होगा ।

वृषत्रे जायमानस्य चतुर्थे यदि चन्द्रमाः ।

गुरुणा च बुधेनापि वीक्षितो यदि योगदः ॥ ३ ॥

भावार्थ - चन्द्रमा यदि चतुर्थ भाव में सिंह राशि में गुरु और बुध द्वारा दृष्ट हो, तो बहुत धन आदि देता है ।

व्याख्या – महर्षि पाराशर ने वृषभ लग्न वालों के लिए चन्द्र को पापी कहा है, क्योंकि यह तृतीय स्थान का स्वामी बनता है । ग्रन्थकार की सम्मति में यदि चन्द्र पर गुरु और बुध की दृष्टि हो, तो वह बहुत शुभ फल (धन आदि) के देने वाला हो जाता है ।

गुरु लाभेश होने के कारण और धनकारक होने के कारण धन के विषय में बहुत शुभ फलदायक है। इसी प्रकार बुध द्वितीय और पंचम दो शुभ धनदायक भावों का स्वामी होकर और गुरु से मिलकर चन्द्रमा पर आर्थिक दृष्टिकोण से शुभ प्रभाव डालेगा। परन्तु मुख्य प्रश्न यह है कि क्या तृतीयेश एक पापी भाव का स्वामी होकर शुभ प्रभाव में आकर और अधिक अशुभ फल न करेगा । ग्रन्थकार की यह सम्मिति नहीं ।

ऐसा लगता है कि जब अष्टम जैसे अशुभ भाव के आधिपत्य का दोष चन्द्र को नहीं लगता, तो तृतीयेश होने का दोष उसे क्यों लगेगा । हमको अन्ततः यह मानना होगा कि चन्द्र एक लग्न के रूप में गुरु और बुध के शुभ प्रभाव में आकर शुभ फल ही करेगा ।

वृषभ जायमानस्य कुजस्सप्तमगश्शुभः ।

लाभस्थौ भानुभाग्येशौ दीर्घायुर्योगवान् सदा ॥ ४ ॥

भावार्थ - वृश्चिक राशि में सप्तम स्थान में स्थित मंगल शुभ फल करता है। सूर्य और शनि (नवमेश) यदि लाभ स्थान में स्थित हों, तो जातक धनी और दीर्घायु होता है।

व्याख्या – पाराशरीय नियमों के अनुसार द्वादशेश स्थानान्तर अर्थात् यहाँ सप्तम भाव का फल करेगा। एक नैसर्गिक पापी ग्रह होकर मंगल केन्द्राधिपति होकर अपना पापत्व खो देगा । अतः उसका पुनः केन्द्र में निज राशि में स्थित होना उसके शुभत्व की वृद्धि करेगा (देखिए नियमाध्याय का नियम संख्या ४) ।

जहाँ तक सूर्य और शनि की एकादश स्थान में स्थिति का प्रश्न है, सूर्य एक लग्न के नाते और शनि एक आयुष्य कारक के नाते प्रबल उपचय स्थान में होकर बलवान् होंगे और इसीलिए आयु को बढ़ावेंगे ।

सूर्य और शनि की युति योगप्रद भी हो जावेगी, क्योंकि शनि को कोणेश सूर्य की सहायता मिलेगी ।

वृषभलग्ने तु जातस्य गुरोस्सोमसुतस्य च ।

संबन्धो वीक्षणम् वाऽपि विद्यते धनयोगदः ॥ ५ ॥

भावार्थ - यदि वृषभ लग्न हो और गुरु और बुध परस्पर एक दूसरे को देखते हों अथवा एक राशि में स्थित हों, तो धनदायक योग बनाते हैं ।

व्याख्या – गुरु धनकारक होता हुआ और एकादशेश होता हुआ धन का और अधिक प्रतिनिधित्व करता है । इसी प्रकार बुध स्वतन्त्र रूप से द्वितीयेश और पंचमेश होता हुआ शुभ है । इसका गुरु से युति आदि सम्बन्ध दो धनदायक ग्रहों का सम्बन्ध होगा और इसलिए धन की सृष्टि जातक के लिए करेगा ।

वृषभे जायमानस्य गुरोस्सोमसुतस्य च ।

कुजेन सहसम्बन्धो वीक्षितो वा भवेद्यदि ।

विशेष धन संप्राप्तिम् न प्राप्नोति न संशयः ॥ ६ ॥

भावार्थ - यदि श्लोक संख्या ५ के अनुसार गुरु और बुध का पारस्परिक दृष्टि आदि सम्बन्ध हो, परन्तु साथ ही इन पर मंगल का भी प्रभाव हो, तो विशेष धन की प्राप्ति नहीं होती ।

व्याख्या – पाराशरीय नियमों के अनुसार द्वादशेश मंगल ने सप्तम भाव का फल करना है। एक पापी ग्रह के नाते मंगल सप्तम केन्द्र का स्वामी होकर अशुभ नहीं रहता, परन्तु इसको शुभ भी तो नहीं कहा जा सकता, इसलिए इसकी दृष्टि में कुछ–न–कुछ पापत्व रहेगा जोकि

गुरु तथा बुध के शुभत्व को कम करेगा, इसलिए 'बहुत धन' की प्राप्ति न होगी, तो भी धन की पर्याप्त प्राप्ति रहेगी ।

वृषभे जायमानस्य गुरुसौम्यकुजा यदि ।
परस्परयुतास्सौम्यदायस्तु ऋणयोगदः ॥ ७ ॥

भावार्थ - वृषभ लग्न हो और गुरु, बुध और मंगल यदि एक राशि में स्थिति हों, तो बुध की दशा ऋण देने वाली होगी ।

व्याख्या – प्रत्येक जन्म कुण्डली में छठा, आठवाँ और बारहवाँ भाव बुरे भाव माने गये हैं। यह भाव अभाव, कमी, निर्धनता आदि के सूचक हैं। अब आप देखेंगे कि गुरु की मूल त्रिकोण राशि अष्टम स्थान में पड़ती है और मंगल की द्वादश भाव में, इसलिए इन दोनों ने मिलकर ऋण की सृष्टि करनी है। बुध का काम तो दूसरों के प्रभाव को व्यक्त करना हैं, इसलिए बुध अपनी दशा में मंगल और गुरु के ऋणदायक प्रभाव को ला खड़ा कर देगा ।

भौमदायस्तु धनदो गुरोर्दायस्तु मिश्रदः
केन्द्रस्थितस्य सौम्यस्य दायोर्योगप्रदस्मृतः ॥ ८ ॥

भावार्थ - गत श्लोक में वर्णित गुरु, मंगल और बुध की युति के सम्बन्ध में बुध का फल कहकर अब ग्रन्थकार मंगल और गुरु का फल कहते हैं कि मंगल तो अपनी दशा में धन देगा, परन्तु गुरु की दशा मिश्रित फल के देने वाली होगी।

व्याख्या – मंगल अपनी दशा में गुरु और बुध का फल करेगा, क्योंकि पापी केन्द्रेश होने के कारण यह पापी नहीं रहा और इसीलिए शुभ प्रभाव में आकर शुभ फल करेगा, परन्तु गुरु ने मंगल और बुध का फल करना है । मंगल तटस्थ है और बुध भी मंगल के साथ मिलकर तटस्थ, अतः गुरु जहाँ बुध की युति के कारण और अपने लाभेश होने

के कारण शुभ फल करेगा, वहाँ वह मंगल के तटस्थ होने के कारण अपने शुभ फल में कमी भी पावेगा, इसलिए गुरु का फल मिश्रित कहा।

बुध जब अकेला केन्द्र में स्थित होगा, तो शुभ फल देगा । कारण कि द्वितीयेश और पंचमेश होने के नाते, "स्थानान्तरानुगुण्येन" के नियमानुसार इसने पंचम त्रिकोण का फल करना है, जोकि शुभ होगी और चूँकि बुध ने अपनी केन्द्र स्थिति का भी फल करना है, यह फल शुभता से बढ़कर योगप्रद हो जावेगा।

लग्नस्थो बुधशुक्रौ तु सप्तमस्थो गुरुमंदिः ।

बुधदायस्तु प्रबलयोगदो वृषजन्मनः ॥ ९ ॥

भावार्थ - यदि वृषभ लग्न में बुध और शुक्र हों और गुरु की सप्तम दृष्टि उन पर हो, तो बुध अपनी दशा में बहुत ऊँची कोटि का योगफल करता है ।

व्याख्या – बुध द्वितीय और पंचम का स्वामी होने से, गुरु लाभेश होने से और शुक्र लग्नेश होने से सभी धन द्योतक होंगे और इसीलिए धनदायक सिद्ध होंगे।

यदि इस योग पर मूल त्रिकोण राशि के आधिपत्य की दृष्टि से विचार किया जावे, तो भी फल शुभ ही निकलता है। कारण कि शुक्र की मूल त्रिकोण राशि छठे भाव में पड़ती है । शुक्र छठे से आठवें होने के कारण ऋण आदि का नाश कर विपरीत राजयोग का शुभफल करेगा।

इसी प्रकार गुरु की मूल त्रिकोण राशि (धनु) अष्टम में पड़ती है । गुरु अष्टम से द्वादश है। यहाँ भी अष्टम को हानि पहुँचाने के कारण गुरु शुभ फलप्रद है । बुध ने तो गुरु और शुक्र के सम्मिलित फल को ही व्यक्त करना है, अतः बुध भी शुभ फलदायक होगा ।

लग्नस्थौ कुजशुक्रौ तु मकरस्थो गुरुमंदि ।

गुरुसौम्यदशाकाले भाग्यंस्याद् वृषजन्मनः ॥ १० ॥

भावार्थ - यदि मंगल और शुक्र वृषभ लग्न में हों और गुरु मकर में, तो गुरु और मंगल की दशा में भाग्य फले-फूलेगा ।

व्याख्या – ऐसा प्रतीत होता है कि श्लोक में "सौम्य" शब्द के स्थान पर "भौम" शब्द होना चाहिए। चूँकि योग बनाने वाले ग्रहों में श्लोक के पूर्वार्द्ध में मंगल, शुक्र और गुरु का उल्लेख है, फल भी इन्हीं ग्रहों का कहना बनता है न कि बुध का, जिसका कोई उल्लेख नहीं। गुरु की दशा तो इसलिए शुभ और भाग्यप्रद होगी कि गुरु अपनी राशि धन से द्वितीय और मीन से एकादश है अर्थात् दोनों राशियों से शुभ स्थानों में स्थित है।

मंगल की दशा इसलिए शुभ होगी कि तटस्थ मंगल पर दो नैसर्गिक शुभ ग्रहों शुक्र और गुरु का प्रभाव होगा । फल अच्छा होगा, परन्तु योगप्रद नहीं। क्योंकि गरु और शुक्र की मूल त्रिकोण राशि त्रिक भावों में पड़ती है।

मन्दसौम्यकुजा भाग्ये राहुः कुंभगतो यदि ।
कुजराहुदशा गंगास्नानदा वृषजन्मनः ॥ ११ ॥

भावार्थ - यदि शनि, बुध और मंगल नवम स्थान में हों और राहु कुंभ में दशम स्थान में हो, तो मंगल और राहु की दशा में गंगा स्नान होगा ।

व्याख्या – गंगा स्नान एक धार्मिक कृत्य है, अतः इसका नवम और दशम भावों से घनिष्ट सम्बन्ध है । नवम भाव में उच्च मंगल धर्म की उत्कृष्टता का द्योतक है। उसके साथ दशमेश शनि की यति मंगल की धार्मिकता में वृद्धि करती है और बुध ने तो अपनी युति से मंगल और शनि के धार्मिक फल ही को व्यक्त करता है। राहु की दशम स्थिति

का उल्लेख पहले आ चुका है (देखिए मेष लग्न पर श्लोक संख्या २२) ।

चन्द्रशुक्रौ तु षष्ठस्थौ लाभे सौम्यगुरु यदि ।
गुरुदाये च संप्राप्ते धनयोग उदीरितः ॥ १२ ॥

भावार्थ - यदि चन्द्र और शुक्र तुला में छठे भाव में हों और मंगल गुरु मीन राशि में एकादश स्थान में हों, तो गुरु की दशा धनदायक होती है ।

व्याख्या – गणित–ज्योतिष के अनुसार शुक्र और बुध सूर्य से तीन भावों से अधिक दूरी पर नहीं हो सकते, इसलिए संभवतया भौम के स्थान पर "सौम्य " छप गया है ।

गुरु एकादशेश और बुध द्वितीयेश के सम्बन्ध के कारण उनके साझे गुण "धन" का प्रादुर्भाव होगा । यदि गुरु मंगल को एकादश में लिया जाए, तो भी गुरु तो अपनी दोनों राशियों के शुभ स्थान में स्थित होने के कारण और एकादश भाव में स्वक्षेत्री होने के कारण शुभ फल करेगा और मंगल का योग हानिकर सिद्ध न होगा ।

शुक्रस्यदाये संप्राप्ते धनप्राबल्यमादिशेत् ।
भाग्ययोगं समाप्नोति वृषजन्म न संशयः ॥ १३ ॥

भावार्थ - जब शुक्र की दशा आवे (देखिए पिछला श्लोक) तो धन और भाग्य खूब चमकें ।

व्याख्या – साधारणतया वृषभ लग्न वालों के लिए शुक्र की दशा अच्छी नहीं होती, क्योंकि शुक्र की मूल त्रिकोण राशि एक त्रिक भवन (छठे भाव) में पड़ती है । इस कारणवश महर्षि पराशर ने शुक्र को इस लग्न वालों के लिए 'पापी' ठहराया है ।

परन्तु यहाँ शुक्र की स्थिति शुभ फलदायक है । उसमें कारण यह है कि शुक्र से युति के कारण चन्द्रमा भी सूर्य के समीप ही होगा और

इसलिए पक्षबल में निर्बल होकर एक पापी ग्रह के रूप में शुक्र को पीड़ित करेगा और फिर मंगल की अष्टम दृष्टि भी शुक्र पर पड़ती है जिससे शुक्र और भी अधिक निर्बल होगा । इस प्रकार षष्ठेश पापी शुक्र के पीड़ित होने के कारण छठे भाव प्रदर्शित अभाव आदि का नाश होकर विपरीत राजयोग द्वारा धन की प्राप्ति होगी ।

वृषभे जायमानस्य लग्ने चन्द्रस्थितो यदि ।
विशेष धनयोगं तु न प्राप्नोति जातकः ।। १४ ।।

भावार्थ - वृषभ लग्न में स्थित चन्द्र विशेष धनदायक नहीं होता।

व्याख्या – हमारी सम्मति में चन्द्रमा के पक्ष वल पर बहुत कुछ निर्भर करता है। यदि यह सूर्य से दूर शुभ दृष्ट हो, तो अवश्य उच्च पदवी के देने वाला होता है।

इतर जायमातो भाग्यवान् भवति ध्रुवम्

भावार्थ – यदि वृषभ को छोड़कर अन्य कोई लग्न हो और चन्द्रमा लग्न में स्थित हो, तो जातक निश्चय ही भाग्यशाली होता है ।

व्याख्या – यह श्लोकार्द्धंप्रक्षिप्त प्रतीत होता है। एक तो यह अध्याय के अंत में आया है। दूसरे, इसका आशय गत श्लोक के आशय से विरुद्ध पड़ता है। यदि उच्च राशि का होकर भी चन्द्रमा लग्न में शुभ फलदायक नहीं, तो दूसरी किसी राशि में लग्नस्थ चन्द्रमा कैसे शुभ हो सकता है।

भावार्थ रत्नाकर

आप नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके इस पुस्तक के आनलाईन संस्करण को भी पढ सकते है ।

1. मेष लग्न | वृश्चिक लग्न
2. वृषभ लग्न | तुला लग्न
3. मिथुन लग्न | कन्या लग्न
4. कर्क लग्न | सिंह लग्न
5. धनु लग्न | मीन लग्न
6. मकर लग्न | कुंभ लग्न
7. अध्याय 2 | धन योग | विद्या | खान-पान
8. अध्याय 3 भ्रातृ-भाव |अध्याय 4 वाहन तथा भाग्य | अध्याय 5 शत्रु और रोग
9. अध्याय 6 स्त्री और काम | अध्याय 7 आयु और स्वास्थ्य
10. अध्याय 8 भाग्य योग | अध्याय 9 राज योग
11. अध्याय 10 तीर्थ स्नान | अध्याय 11 मृत्यु योग
12. अध्याय 12 दशा के परिणाम
13. अध्याय 13 साधारण योग | अध्याय 14 ग्रहमालिका योग | अध्याय 15 ग्रहों का आधिपत्य आदि
14. नियम अध्याय

मिथुन लग्न

तृतीयस्थौ रविबुध बुधचाये समागमे ।
बुधो योगप्रदस्सत्यं युग्मजातस्य भाग्यदः ॥१॥

भावार्थ - यदि मिथुन लग्न में जन्म हो और सूर्य और बुध तृतीय भाव में स्थित हों, तो बुध अपनी दशा भुक्ति में बहुत धनदायक आदि सिद्ध होता है।

व्याख्या – बुध के सम्बन्ध में मौलिक बात जो सदा ध्यान में रखने योग्य है, वह यह है कि बुध ने वैसा फल करना है जैसा कि उस ग्रह का है, जिसके साथ बुध बैठा है। सूर्य यहाँ नैसर्गिक पापी होकर निज राशि में तृतीय भाव में स्थित है । चन्द्र की भाँति सूर्य भी एक लग्न है । इसको भी तृतीयेश होने का दोष नहीं लगता, अतः लग्न रूप से सूर्य को बलवान् समझना चाहिए। ऐसे शुभ ग्रह के साथ बुध स्थित होकर शुभ फल ही को करेगा ।

भृगुभौमेन्दवः खेटाः धनस्थाने स्थिता यदि ।
शुक्रदाये धनप्राप्ति युग्मजातस्समश्नुते ॥ २ ॥

भावार्थ – यदि शुक्र, मंगल और चन्द्रमा द्वितीय भाव में कर्क राशि में स्थित हों, तो शुक्र अपनी दशा भुक्ति में अच्छे धन को प्राप्त करवाता है ।

व्याख्या – मिथुन लग्न वालों के लिए मंगल की मूल त्रकोण राशि लाभ भाव में पड़ती है, इसलिए मंगल धनप्रद ग्रह है। इसी प्रकार चन्द्रमा धनेश होने से धनप्रद है और शुक्र पंचमेश होने से । तीनों की धन भाव में स्थिति पुनः धनप्रद है । हाँ, इतना ध्यान रहे कि चन्द्रमा सूर्य के समीप होकर क्षीण नहीं होना चाहिए।

मिथुने जायमानस्य धरासूनुर्धने स्थितः ।
शनिचन्द्रावष्टमस्थौ शनेदये समागमे ॥ ३ ॥
शनिस्तु मिश्र फलदः कुजदाये समागमे ।
धनयोगो भवत्येव जातकस्य न संशयः ॥ ४ ॥

भावार्थ – यदि मंगल द्वितीय भाव में कर्क राशि में स्थित हो, शनि और चन्द्र अष्टम भाव में हों, तो शनि अपनी दशा में मिश्रित फल देगा। परन्तु मंगल अपनी दशा में अवश्य धनदायक सिद्ध होगा ।

व्याख्या – मंगल, शनि और चन्द्र क्रमशः एकादश, नवम और द्वितीय भाव के स्वामी होने के कारण धन के प्रतिनिधि हैं। नियमाध्याय नियम सं० ११ के अनुसार शनि ने मंगल चन्द्र का फल देना है जोकि शुभ होगा। परन्तु शनि के चन्द्र पर नैसर्गिक पाप प्रभाव के कारण तथा इसकी चन्द्रमा के साथ शत्रुता के कारण फल में थोड़ी कमी की संभावना है। परन्तु मंगल जिसने शनि और चन्द्र का शुभ फल करना है, क्रूर होता हुआ भी चन्द्र का मित्र है, इसलिए इसका फल शनि को अपेक्षा

शुभकर रहेगा।

अपनी राशियों से स्थिति के विचार से भी शनि की अपेक्षा मंगल शुभ होगा, क्योंकि वह मेष और वृश्चिक दोनों से शुभ स्थान में है जबकि शनि अपनी मूल त्रिकोण राशि से द्वादश है ।

मिथुने जायमानस्य कुजमन्दौ द्वितीयगो ।

अष्टमस्थौ भवेदिन्दु शनिभौम दशागमे ॥ ५ ॥

तत्काले धनहीनस्यात्पूर्वभाग्यं विनश्यति ।

किञ्चिद्धनयुतो जातो भवेदेवं न संशयः ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि शनि और मंगल द्वितीय भाव में कर्क राशि में स्थित हों और चन्द्रमा अष्टम भाव में हो, तो शनि और मंगल की दशा में जातक को धन की हानि होती है। फिर भी वह कुछ धन अवश्य पाता है ।

व्याख्या – भाव यह है कि जब मंगल की दशा में शनि की भुक्ति होगी या शनि की दशा में मंगल की भुक्ति होगी, तो मंगल और शनि अपना सम्मिलित पाप प्रभाव द्वितीय भाव, उसके स्वामी और चन्द्र पर डालेंगे जिसके फलस्वरूप संचित धन को हानि होगी, तो भी चन्द्रमा

चूँकि धनेश होकर धन को देखता है, बली होगा । अतः कुछ शुभ भी होगा ।

मिथुने जायमानस्य धननाथस्तु चन्द्रमाः ।
मारको न भवत्येव मानवस्य न संशयः ॥ ७ ॥

भावार्थ - द्वितीयेश चन्द्र मारक सिद्ध नहीं होता ।

व्याख्या - यद्यपि आयु भाव तृतीय से द्वादश भाव का स्वामी होने से चन्द्रमा मारकेश कहा जा सकता है, तो भी वह मारक का कार्य नहीं करता । इसका कारण चन्द्र का लग्न रूप होना प्रतीत होता है, परन्तु हम समझते हैं कि ऐसा तभी होगा जब चन्द्रमा पक्ष बल में बलवान् हो।

मिथुने जायमानस्य कुजचन्द्रौ तु लाभगो ।
भाग्यस्थो यदि वा मन्दो विशेष धनयोगदः ॥ ८ ॥

भावार्थ - चन्द्रमा और मंगल यदि एकादश भाव में हों और शनि नवम भाव में (कुंभ राशि में), तो विशेष धन प्राप्ति का योग बनता है ।

व्याख्या - जैसा कि हम देख चुके हैं, चन्द्र और मंगल धनेश और लाभेश होने के कारण धन द्योतक ग्रह हैं, अतः उनकी धन द्योतक भाव (एकादश) में स्थिति भी धनदायक सिद्ध होगी ।

यहाँ शनि भी नवम का फल करने के कारण (शनि की मूल त्रिकोण राशि नवम मे होगी) धन द्योतक होगा, इसलिए इसकी चन्द्र मंगल पर दृष्टि भी धन में कमी न करेगी, जिसके फलस्वरूप विशेष धन की प्राप्ति होगी ।

युग्मजातस्य भाग्यस्थौ गुरुमन्दी तयोर्दशा ।
काले भवति गंगायांस्नानं भवति निश्चयः ॥ ९ ॥

भावार्थ – यदि गुरु और शनि नवम भाव में (कुंभ राशि में) हों, तो जातक को इन ग्रहों की दशा भुक्ति में गंगा स्नान की प्राप्ति होगी।

व्याख्या – गुरु और शनि की युति दशमेश और नवमेश की युति होगी और वह भी धर्म स्थान में। नवम भाव की भाँति दशम भाव भी धर्म–कर्म का भाव है । अतः पारस्परिक धार्मिक प्रभाव के कारण शुभ यज्ञीय फल होगा, जो गंगा स्नान आदि धार्मिक कृत्य देगा ।

मिथुने जायमानस्य बुधो लाभस्थितो यदि ।
ज्येष्ठभ्रातृ विरोधस्तु जातकस्य भवेध्रुवम् ॥ १० ॥

भावार्थ – यदि बुध एकादश भाव में (मेष में) हो, तो जातक का निश्चय ही अपने बड़े भाई से विरोध होगा ।

व्याख्या – मंगल बुध को अपना शत्रु समझता है, इसलिए लग्नेश बुध जब जातक के निज (Self) का प्रतिनिधि होता हुआ मेष राशि में स्थित होगा, तो वह एकादश स्थान में पीड़ित होगा । एकादश स्थान चूंकि बड़े भाई का है, यह शत्रु स्थिति बड़े भाई से विरोध उत्पन्न करेगी।

स्मरण रहे कि यह विरोध बड़े भाई की ओर से होगा, क्योंकि बुध तो एकादश में जाकर एकादश (बड़े भाई) की सेवा में अथवा उसके अधीन है। पहल (Initiative) तो मंगल (एकादशेश) बड़े भाई की ही होगी ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

कर्क लग्न

कर्किजातस्य च गुरुविशेषेण न योगदः ।
मकरे जायमानस्य बुधो योगप्रदो भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ - कर्क लग्न के जातकों के लिए गुरु कोई विशेष धनदायक सिद्ध नहीं होता, परन्तु मकर लग्न वालों के लिए बुध विशेष धनदायक होता है।

व्याख्या - ग्रन्थकार का अभिप्राय मूल त्रिकोण राशि के प्रभाव के महत्व को दर्शाना है । यद्यपि कर्क और मकर लग्न में क्रमशः गुरु और बुध को छठे और नवम भाव का एक जैसा अधिपत्य प्राप्त होता है, तो भी दोनों के फल में अन्तर है। गुरु की अपेक्षा बुध बहुत शुभ फल करता है। कारण यही है कि मकर लग्न हो, तो बुध को मूल त्रिकोण राशि कन्या नवम भाव में पड़ेगी और बुध नवम त्रिकोण का शुभ धनप्रद फल करेगा।

और यदि कर्क लग्न हो तो गुरु की मूल त्रिकोण राशि छठे भाव में पड़ेगी जिसके फलस्वरूप गुरु साधारण-सा ग्रह बनकर रह जावेगा, विशेष धन न दे पावेगा । हाँ, इतना ध्यान रहे कि बुध का शुभ फल भी तभी मिलेगा जब उस पर पाप प्रभाव न हो ।

कर्कटे जायमानस्य भौंमो योगप्रदो भवेत् ।
पञ्चमे वाथराज्येवा योगदो भवति ध्रुवम् ॥ २ ॥

भावार्थ - कर्क लग्न वालों लिए मंगल योगकारी होता है, परन्तु यदि पञ्चम अथवा दशम में पड़ जावे, तो विशेष रूप से शुभ फल करता है ।

व्याख्या – योगकारक मंगल स्वक्षेत्री होने से और भी बलवान् हो जावेगा, इसीलिए अधिक शुभ फलदायक सिद्ध होगा ।

जातस्य शुक्रस्तु व्ययस्थो धनगोऽपि वा ।
योगप्रदस्तु भवतिह्यन्यत्र नहि योगदः ॥ ३ ॥

भावार्थ – शुक्र यदि द्वादश भाव में (मिथुन राशि में) स्थित हो, तो अच्छा धनादि देता है । यदि और किसी भाव में स्थित हो, तो बहुत अच्छा फल नहीं करता ।

कर्किजातस्य भौमेज्य चन्द्राश्च धनगो यदि ।
रविशुक्री पञ्चमस्थो धनवान् भाग्यवान् भवेत् ॥ ४ ॥

भावार्थ – यदि मंगल, गुरु और चन्द्रमा द्वितीय भाव में (सिंह राशि में) हों और सूर्य और शुक्र पंचम भाव में हों, तो जातक धनी और भाग्यशाली होता है ।

व्याख्या – राज योग कारक मंगल का तथा भाग्येश गुरु का और लग्नेश चन्द्र का धन स्थान मे बैठना सभी धन द्योतक ग्रहों का धन स्थान में बैठना है, जिसके फलस्वरूप व्यक्ति धनी तथा भाग्यशाली बनता है। इसी प्रकार धनेश सूर्य और लाभेश शुक्र की शुभ स्थान में युति भी धन द्योतक और धनदायक होगी।

बुधशुक्रौ पंचमस्थो बुधदाये समागमे ।
ककिजातस्य च बुधो योगदो भवति ध्रुवम् ॥ ५ ॥

भावार्थ – यदि बुध और शुक्र पंचम भाव में (वृश्चिक राशि में) स्थित हों, तो बुध अपनी दशा में बहुत शुभ फल करता है ।

व्याख्या – बुध मौलिक नियमानुसार शुक्र ही का फल करेगा, जिससे कि यह युति द्वारा प्रभावित है। शुक्र चूंकि लाभेश है, बुध भी लाभप्रद सिद्ध होगा । यद्यपि बुध स्वतंत्र रूप में द्वादश और तृतीय दो अशुभ भावों का स्वामी है ।

कर्किजातस्य लाभे तु सौम्यशुक्रेन्दवस्थिताः ।

लग्नसंस्थो यदि गुरुः राज्यस्थाने स्थितो रविः ॥ ६ ॥

राजा भवेत्साहसिकः गुणवान् कीर्तिवान् भवेत् ।

बृहज्जातकयोगोयं महाराजिक संज्ञिकः ॥ ७ ॥

भावार्थ – यदि बुध, शुक्र और चन्द्र एकादश स्थान में (वृषभ राशि में) हों, गुरु लग्न में और सूर्य दशम भाव में हों, तो जातक एक उत्साही, गुणी और यशस्वी राजा होता है । इस योग को 'वृहत् जातक' ग्रन्थ में 'महाराजा' योग की संज्ञा दी है ।

व्याख्या – राज्य सत्ता की प्राप्ति के लिए लग्नों का और राज्य का बलवान् होना अनिवार्य है । ये हैं (क) लग्न, (ख) लग्नेश, (ग) चन्द्र लग्न तथा (घ) चन्द्र लग्न का स्वामी । यहाँ ये चारों के चारों निस्सन्देह बलवान् हैं ।

लग्न तो इसलिए बली है कि इसमें उच्च का होकर शुभतम ग्रह गुरु स्थित है । लग्नेश चन्द्र इसलिए बली है कि वह लाभ स्थान उच्च भी है और दो शुभ ग्रहों से युक्त भी । चन्द्र भी इस प्रकार बली हुआ । यद्यपि पक्ष बल में वह बली नहीं ।

चन्द्र लग्न का स्वामी भी स्वक्षेत्री होकर और दो शुभ ग्रहों से युक्त होकर बली है। राज्य इस लिए बली है कि एक तो राज्यकारक सूर्य

प्रमुख केन्द्र में उच्च है और दूसरे दशम स्थान भी उच्च ग्रह पाकर बलवान् है ।

रविभौमौ तु राज्यस्थौ धनवान् कविजातकः ।
ककिजातस्य च गुरोर्दशाकालस्तु मारकः ॥ ८ ॥

भावार्थ - यदि सूर्य और मंगल दशम भाव में (मेष राशि में) हों, तो जातक धनवान होगा। गुरु की दशा उसके लिए मारक सिद्ध होगी ।

व्याख्या - सूर्य और मंगल दोनों लग्नेश चन्द्रमा के मित्र हैं, जिनमें सूर्य तो धन भाव का स्वामी है और मंगल राजयोग कारक है फिर दोनों प्रमुख दशम केन्द्र में स्थित हैं जहाँ पर कि दोनों को 'दिक्' बल प्राप्त होता है इसलिए सूर्य और मंगल बहुत शुभ फल के देने वाले होंगे।

गुरु के मारकत्व में गुरु के आधिपत्य का हाथ है, चूंकि गुरु की मूल त्रिकोण राशि छठे भाव में पड़ती है जोकि रोग भाव है, इसलिए गुरु रोगेश होकर अपनी निर्बल स्थिति द्वारा मृत्यु तक दे सकता है ।

कर्कटे जायमानस्य बुधशुक्रौ व्ययस्थितौ ।
शुक्रदाये च संप्राप्ते राजयोग उदीरितः ॥ ६॥

भावार्थ - यदि बुध और शुक्र द्वादश स्थान में (मिथुन राषि में) स्थित हों, तो शुक्र अपनी दशा में राज योग देता है ।

व्याख्या - शुक्र की द्वादश भाव में स्थिति बहुत शुभ फल देने वाली है । इसमें कारण यही है कि शुक्र भी एक भोग-विलास का ग्रह है और द्वादश भाव भी भोग-विलास का घर । और फिर यहाँ तो बुध द्वादशेश भी सम्मि लित है, इसलिए द्वादश भाव, उसका स्वामी बुध और शुक्र सभी भोग-विलास राज योग के सुख देंगे ।

कर्कटे जायमानस्य चन्द्रजीवौ तु लग्नगौ ।
राजयोग इति प्रोक्तः भाग्यवान्कीतिमान्भवेत् ॥ १० ॥

भावार्थ - कर्क लग्न में यदि चन्द्र और गुरु स्थित हों, तो जातक राजयोगी, भाग्यशाली और यशस्वी होता है ।

व्याख्या - कर्क लग्न के श्लोक संख्या १ से हमने देखा था कि गुरु साधारण फल करता है, तो भी यह फल अशुभ नहीं कहा जा सकता, अतः यदि गुरु की यह थोड़ी मात्रा में शुभता यदि लग्न लग्नेश, चन्द्र लग्न और चन्द्र लग्न के स्वामी सभी को मिल जावे, तो अन्ततोगत्वा लग्न को सामूहिक रूप से तो बहुत शुभता की प्राप्ति हो जावेगी । इसी कारण से गुरु चन्द्र की कर्क लग्न में श्लाघा की गई, परन्तु चन्द्रमा को सूर्य से दूर होना होगा ।

कर्कटे जायमानस्य चन्द्रो लग्ने स्थितो यदि ।
मकरस्थो भवेत्भौमः राजयोग उदीरितः ॥ ११ ॥

भावार्थ - यदि चन्द्र कर्क लग्न में हो और मंगल सप्तम भाव में हो, तो इस ग्रह स्थिति से राजयोग की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या - यहाँ भी लग्न लग्नेश चन्द्र लग्न और चन्द्र लग्न के स्वामी सभी पर राजयोग कारक मंगल की दृष्टि के कारण राजयोग की प्राप्ति कही। मंगल का उच्च होना दशमेश का उच्च होना है, इसलिये भी राज योग की प्राप्ति युक्तियुक्त है ।

कर्कटे जायमानस्य लग्ने चन्द्रस्थितो यदि ।
तुलायां यदि मन्दस्तु राजयोग उदीरितः ॥ १२ ॥

भावार्थ – यदि चन्द्र कर्क लग्न में हो और शनि तुला में चतुर्थ भाव में हो, तो राजयोग होता है ।

व्याख्या – वैसे तो शनि एक अभाव सूचक ग्रह है, इसलिए इसकी लग्न लग्नेश और चन्द्र लग्न और उसके स्वामी पर दृष्टि अभाव और दरिद्रतादायक होनी चाहिये ।

परन्तु यहां 'कारक' योग बनता है, क्योंकि चन्द्र निज राशि में केन्द्र में है और शनि उच्च राशि में केन्द्र में है । इस प्रकार दो बलवान् ग्रहों का लग्न से और एक दूसरे से केन्द्र में होना इस 'कारक' योग की सृष्टि करता है ।

कर्कटे जायमानस्य चन्द्रो लग्ने स्थितो यदि ।

मेषस्थितो यदि रविः राजयोग उदीरितः ।। १३ ।।

भावार्थ - यदि कर्क लग्न में चन्द्र और दशम में सूर्य हो, तो भी राजयोग होता है ।

जातस्य लग्नस्थौ रविसौम्यौ त सौख्यगः ।

कविर्लाभे चन्द्रभौमगुरवः संस्थिता यदि ॥ १४ ॥

रवेर्दा त संप्राप्ते निर्धनं योगमश्नुते ।

इतरेषां दशाकाले योगदास्तु भवन्ति हि ॥ १५ ॥

भावार्थ - यदि सूर्य और बुध कर्क लग्न में हों, शुक्र चतुर्थ भाव में, चन्द्र मंगल और गुरु एकादश भाव में हों, तो जातक को सूर्य की दशा में निर्धनता की प्राप्ति होगी और अन्य ग्रहों की दशा धनप्रद रहेगी ।

व्याख्या – ग्रह प्रायः उन ग्रहों का भी फल देते हैं जिनसे कि वे प्रभावित होते हैं। यहाँ सूर्य पर केवल बुध ही का प्रभाव है, इसलिए

सूर्य बुध के अनिष्ट फल को देगा । बुध दो अशुभ घरों द्वादश और तृतीय का स्वामी होने से पाप फलदायक है ।

चन्द्र, मंगल तथा गुरु एकादश स्थान में सभी शुभ फलदायक होंगे, क्योंकि सभी आर्थिक दृष्टि से शुभ हैं । चन्द्र लग्नेश है, मंगल राजयोग कारक है और गुरु धनकारक ।

गंगास्नानं किंजस्य गुरुसौम्यो तु लाभगौ ।
शनिराहू पंचमस्थौ राहुदाये तु सिध्यति ॥ १६ ॥

भावार्थ – यदि गुरु और बुध एकादश स्थान में हों और शनि तथा राहु पंचम भाव में (वृश्चिक राशि में) हों, तो राहु की दशा में गंगा स्नान होता है ।

व्याख्या – राहु चूँकि एक छाया ग्रह है, यह उन्हीं ग्रहों का फल करेगा, जिनके प्रभाव में यह है । गुरु चूँकि नवम भाव का स्वामी भी है और धर्म का कारक भी, गुरु के राहु पर प्रभाव (सप्तम दृष्टि) के कारण धार्मिक कृत्यों में राहु प्रवृत्त करायेगा ।

बुध स्वतन्त्र रूप से भी यज्ञीय ग्रह है और यहाँ तो उसने गुरु का फल करना है, क्योंकि गुरु के साथ बैठा है; अतः यह गुरु के यज्ञीय और धार्मिक प्रभाव को और भी बढ़ावेगा । शनि सप्तमेश है अर्थात् दशम से दशम भाव का स्वामी, इसीलिये यह भी दशम की भाँति यज्ञीय होकर कार्य करेगा ।

इस प्रकार तीन यज्ञीय ग्रहों गुरु, बुध और शनि के प्रभाव के कारण छाया ग्रह राहु अपनी दशा में यज्ञीय कृत्य गंगा स्नान आदि में लगावेगा।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

सिंह लग्न

सिंहलग्ने तु जातस्य रविसौम्यकुजा यदि ।

परस्परेण संयुक्ता धनबाहुल्यमादिशेत् ॥ १ ॥

भावार्थ – यदि सिंह लग्न में जन्म हो और सूर्य, बुध और मंगल (दृष्टि अथवा युति) द्वारा परस्पर संबन्धित हों, तो ऐसे जातक के पास बहुत धन होता है।

व्याख्या – सूर्य तो लग्नेश होने के कारण धन का प्रतिनिधि हुआ। बुध धन भाव का स्वामी होने से धन का प्रतिनिधि हुआ और मंगल तो केन्द्र और कोण का स्वामी होने से विशेष धनदायक राज योगकारी ग्रह हुआ, इसलिए धन द्योतक ग्रहों का पारस्परिक संबन्ध धन की प्रचुरता को उत्पन्न करेगा ।

सिंहलग्ने तु जातस्य रविजीवबुधा यदि ।

परस्परेण संयुक्ता धनबाहुल्यमादिशेत् ॥ २ ॥

भावार्थ – यदि सूर्य, गुरु और बुध किसी सिंह लग्न वाले जातक के परस्पर संयुक्त हों, तो जातक बहुत धनी होता है ।

व्याख्या – यहाँ भी योग में भाग लेने वाले सभी ग्रह धन के द्योतक हैं, अतः उनकी युति बहुत धनदायक सिद्ध होगी। सूर्य लग्नेश होकर, गुरु पंचमेश होकर और बुध धनेश होकर धन द्योतक ग्रह हैं ।

सिंहलग्ने तु जातस्य रविसोमसुता यदि ।

अन्योन्यसंयुतौ स्यातां स्वल्प भाग्यमुदीरितम् ॥ ३ ॥

भावार्थ – सिंह लग्न हो और सूर्य तथा बुध का परस्पर युति द्वारा संबन्ध हो, तो थोड़े धन की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – ग्रन्थकार ने किस विचार से इस योग को थोड़ा धन देने वाला योग बताया, स्पष्ट नहीं है। सूर्य ने लग्नेश होने के नाते, शुभ करना ही है और बुध भी दो धन द्योतक घरोंलाभ और धन का स्वामी होकर सूर्य से युति करता हुआ धन की वृद्धि ही करेगा ।

हाँ, यह अवश्य है कि बुध चूंकि स्वतंत्र रूप से फल नहीं करता, इसलिए यह सूर्य के फल को उतना नहीं बढ़ा सकता, जितना कोई और ग्रह जैसे मंगल अथवा गुरु ।

सिंहलग्ने तु जातस्य गुरुशुक्रौ न योगदौ ।

योगभंगकरौ किंतु विदुर्ज्योतिषकोत्तमाः ॥ ४॥

भावार्थ – सिंह लग्न वालों के लिए गुरु और शुक्र की युति योगदायक नहीं होती, बल्कि उल्टा योग को भंग करने वाली होती है।

व्याख्या – सिंह लग्न वालों का गुरु पंचम त्रिकोण का स्वामी होता है और शुक्र दशम केन्द्र का, इसलिए साधारण विद्यार्थी यह विचार कर सकता है कि केन्द्र और त्रिकोण के स्वामियों की युति शुभ फलदायक होगी, परन्तु ऐसा नहीं है।

कारण यह है कि शुक्र का तृतीय भाव का आधिपत्य उसे एक पापी ग्रह बना देता है जिसके कारण उसकी गुरु से युति उल्टा गुरु प्रभाव को भी नष्ट कर देती है, इसलिए केन्द्रेश को शुभ फलदायक होना चाहिये । कम-से-कम वह पापी नहीं होना चाहिये, तभी उसकी त्रिकोणेश के साथ युति योगप्रद सिद्ध हो सकती है।

सिंहलग्ने तुजातस्य तृतीयस्थो भृगुश्शुभः ।

राज्यस्थः शुक्र पापस्यान्नयोगं लभते नरः ॥ ५ ॥

भावार्थ - सिंह लग्न वालों का तृतीयस्थ शुक्र शुभ फलदायक होता है और दशमस्थ शुक्र कोई योगफल नहीं देता ।

व्याख्या - सिंह लग्न वालों के लिये शुक्र दशम और तृतीय स्थान का स्वामी होता है । दशम केन्द्र का स्वामी होने से इसकी शुभता जाती रहती है और तृतीयेश होने से यह एक अशुभ ग्रह हो जाता है ।

यह ग्रह यदि तृतीय भाव में होगा, तब भी स्वक्षेत्री होगा और यदि दशम में हुआ, तो भी स्वक्षेत्री रहेगा, इसलिये उसका स्वक्षेत्र में होना हमको उसकी शुभता अथवा अशुभता के संबन्ध में किसी निर्णय पर पहुँचने में कोई सहायता नहीं करता । यदि शुक्र एक पापी ग्रह होकर स्वक्षेत्र स्थिति द्वारा शुभ बनता हो, तब कुछ बात बनती है ।

ऐसी स्थिति में शुक्र चतुर्थ भाव अधिक समीप होकर तृतीय भाव में दिक् वल अधिक प्राप्त करेगा और इसलिए दशमस्थ स्वक्षेत्री शुक्र की अपेक्षा अधिक शुभ हो जायेगा, क्योंकि दशमस्थ शुक्र दिक् बल से शून्य होगा ।

सिंहलग्ने तु जातस्य रविसौम्यकुजास्थिताः ।
लग्ने बुधदशाकालः धनभाग्यबहुप्रद्रः ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि सिंह लग्न में सूर्य बुध और मंगल स्थित हों, तो बुध की दशा में जातक को धन और भाग्य की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – बुध जैसा कि इसका नियम है, यहाँ सूर्य और मंगल का फल करेगा क्योंकि इनके साथ यह स्थित है । अब चूँकि सूर्य लग्नेश होकर और मंगल राजयोग कारक होकर शुभ है, बुध जातक को बहुत शुभ फल आर्थिक क्षेत्र में देगा। मंगल के भाग्येश होने के कारण बुध भाग्य में भी खूब वृद्धि करेगा।

कुजमन्दौ व्ययस्थौ चेच्छनिदाये समागमे ।
शनिर्योग प्रदस्सत्यं सिंहजातस्यवं ध्रुवम् ॥ ७ ॥

भावार्थ – यदि मंगल और शनि द्वादश भाव में कर्क राशि में स्थित हों, तो शनि अपनी दशा में निश्चय ही योग का शुभ फल देता है ।

व्याख्या – शनि की मूल त्रिकोण राशि सप्तम भाव में पड़ती है, अत: शनि सप्तमेश रूप से कार्य करेगा। एक नैसर्गिक पापी ग्रह केन्द्रेश होकर अशुभ न रहेगा और फिर जब उसके साथ मंगल जैसा राजयोग कारक ग्रह और वह भी अपनी दोनों राशियों मेष और वृश्चिक से शुभ स्थानों में हो, तो शनि और भी अधिक शुभ फलकारी हो जावेगा ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

Bhavarth Ratnakar Hindi PDF Free Download

कन्या लग्न

कन्यालग्ने तु जातस्य भृगोश्चन्द्रस्य वा यदि ।

संबन्धो यदि विद्येत रवेदार्ये धनागमः ॥ १ ॥

भावार्थ – यदि कन्या लग्न में जन्म हो और सूर्य तथा शुक्र का अथवा सूर्य तथा चन्द्र का युति आदि द्वारा संबंध हो, तो सूर्य अपनी दशा में धनी बनाता है ।

व्याख्या – पाराशरीय नियमों के अनुसार द्वादश भाव का स्वामी उस ग्रह का फल करेगा, जिसके साथ वह स्थित होगा, अतः यहाँ सूर्य द्वादशेश होकर जव शुक्र से संबन्ध बनावेगा, तो द्वितीय भाव का शुभ आर्थिक फल देगा और जब चन्द्र से संबंधित होगा, तो भी लाभेश चन्द्र का शुभ धनप्रद फल करेगा ।

शुक्रदाये च संप्राप्ते धनहीनो भवेन्नरः ।

चन्द्रदाये च संप्राप्ते मिश्रायोगं समश्नुते ॥ २ ॥

भावार्थ – गत श्लोक ही के संबन्ध में कहते हैं कि जब सूर्य युक्त शुक्र की दशा होगी, तो जातक के धन की हानि होगी और सूर्य युक्त चन्द्र की दशा में मिश्रित फल होगा ।

व्याख्या – शुक्र एक पापी और शत्रु सूर्य द्वारा पीड़ित होने के कारण धन की हानि करेगा (द्वितीयेश होने से), परन्तु चन्द्र अपनी दशा में मिश्रित फल करेगा, क्योंकि यद्यपि सूर्य चन्द्र को भी पीड़ित करेगा, परन्तु उसका मित्र होने के कारण शुभ फल भी करेगा ।

चन्द्रशुक्रौ सप्तमस्थौ लाभस्थो यदि वा गुरु ।

मेषे रविर्गुरोर्दाये शुक्रदाये समागमे ॥

चतुश्रः पञ्चमा जीवकळत्राणि न संशयः ।

कन्यायां जायमानस्य राजतुल्यस्य कामिनः ॥ ३,४ ॥

भावार्थ – कन्या लग्न में जन्म हो, चन्द्र और शुक्र सप्तम भाव में हो, गुरु एकादश में हो और सूर्य अष्टम में, तो जातक को गुरु तथा शुक्र की दशा में चार अथवा पाँच जीवित पत्नियों की प्राप्ति होगी । ऐसा व्यक्ति उच्च–स्तरीय स्त्रियों से संबन्धित होगा ।

व्याख्या – सप्तम स्थान में सम (Even) राशि में (जोकि स्त्री राशि है) दो स्त्री ग्रह शुक्र और चन्द्र स्थित हैं, इसलिए सप्तमेश स्त्री बाहुल्य का प्रतिनिधि होने के नाते ही स्त्री बन गया और फिर प्राप्ति (एकादश) स्थान में उसकी स्त्री राशि स्थिति उन स्त्रियों की संख्या में वृद्धि करती है । पुनश्च गुरु उसी सप्तम भाव को देखते हुए उस पर वही स्त्री प्रभाव डालता है ।

इस प्रकार बहुत स्त्री ग्रहों का सप्तम और लाभ भाव से संबन्ध होने के कारण एक ही समय में बहुत स्त्रियों की प्राप्ति युक्तियुक्त है । लाभेश और सप्तमेश का व्यत्ययः (Exchange) भी स्त्री बाहुल्य एक कारण है । गुरु इसलिये भी स्त्री है कि वह दो स्त्री भावों अर्थात् चतुर्थ (माता) और सप्तम (जाया) का स्वामी है।

कन्यायां जायमानस्य गुरुशुक्रौ चतुर्थगौ ।

गुरुशुक्रदशाकाले योगदो भवति ध्रुवम् ॥ ५ ॥

भावार्थ – यदि गुरु और शुक्र धनु राशि में चतुर्थ भाव में स्थित हों, तो गुरु और शुक्र अपनी दशा काल में शुभ फल करते हैं ।

व्याख्या – शुक्र कन्या लग्न के लिये शुभ भी है और त्रिकोण का स्वामी भी । इसकी केन्द्रेश गुरु से युति राजयोग उत्पन्न करेगी।

कन्यायां जायमानस्य शनिर्लाभस्थितो यदि ।

शनेदये च संप्राप्ते योगयुक्तो भनेन्नरः ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि शनि कर्क राशि में एकादश भाव में स्थित हो, तो अपनी दशा में धनादि शुभ फल देता है ।

व्याख्या – शनि की मूल त्रिकोण राशि कुंभ छठे भाव में पड़ती है, अतः शनि बुरे भाव का स्वामी हुआ। वह चूँकि छठे से छठे भाव में स्थित है और शत्रु राशि में भी इसलिए वह छठे भाव के लिए बुरा फल करेगा। जिसका अर्थ है विपरीत राजयोग की प्राप्ति अर्थात् शुभ फल की प्राप्ति, क्योंकि बुरों का पीड़ित होना सुखप्रद होता है ।

भावार्थ रत्नाकर

आप नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके इस पुस्तक के आनलाईन संस्करण को भी पढ सकते है ।

1. मेष लग्न | वृश्चिक लग्न
2. वृषभ लग्न | तुला लग्न
3. मिथुन लग्न | कन्या लग्न
4. कर्क लग्न | सिंह लग्न
5. धनु लग्न | मीन लग्न
6. मकर लग्न | कुंभ लग्न
7. अध्याय 2 | धन योग | विद्या | खान-पान
8. अध्याय 3 भ्रातृ-भाव |अध्याय 4 वाहन तथा भाग्य | अध्याय 5 शत्रु और रोग
9. अध्याय 6 स्त्री और काम | अध्याय 7 आयु और स्वास्थ्य
10. अध्याय 8 भाग्य योग | अध्याय 9 राज योग
11. अध्याय 10 तीर्थ स्नान | अध्याय 11 मृत्यु योग
12. अध्याय 12 दशा के परिणाम
13. अध्याय 13 साधारण योग | अध्याय 14 ग्रहमालिका योग | अध्याय 15 ग्रहों का आधिपत्य आदि
14. नियम अध्याय

तुला लग्न

तुला लग्ने तु जातस्य शनिर्योगप्रदो भवेत् ।

तृतीय षष्ठनाथोऽपि गुरुयोंगप्रदो भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ – तुला लग्न वालों के लिए शनि अपनी दशा में बहुत धन देता है। तीसरे और छठे भाव का स्वामी गुरु भी अपनी दशा में योगप्रद होता है।

व्याख्या – शनि, चूँकि केन्द्र और त्रिकोण (चतुथ ओर पंचम) भावों का स्वामी है, राजयोग का फल करता है, परन्तु ग्रन्थकर्त्ता की सम्मति में दो अशुभ भावों–तृतीय और छठे का स्वामी होता हुआ भी गुरु बहुत शुभ फल करता है ।

इस शुभ फल का कारण यही प्रतीत होता है कि गुरु भी एक धनकारक ग्रह है और तृतीय और षष्ट भाव भी उपचय (Income) के भाव हैं, अतः गुरु आर्थिक दृष्टिकोण से शुभ फल करने वाला बन जाता है । यह शुभता केवल गुरु ही को ऐसे आधिपत्य द्वारा प्राप्त होती है, क्योंकि और कोई ग्रह यह आधिपत्य धनकारक रूप से प्राप्त नहीं करता ।

तुला लग्ने तु जातस्य धनसप्तमनायकः ।

न करोति कुजः पापः निधनं तु न संशयः ॥ २ ॥

भावार्थ – तुला लग्न वालों के लिये मंगल द्वितीय और सप्तम दो मारक स्थानों का स्वामी होता हुआ भी मृत्यु कारक सिद्ध नहीं होता ।

व्याख्या – तुला लग्न वालों की कुण्डली में मंगल की मूल त्रिकोण राशि सप्तम भाव में पड़ती है और अन्य राशि वृश्चिक द्वितीय भाव में,

इसलिए मंगल मुख्यतया सप्तम भाव का फल करता है । एक नैसर्गिक पापी ग्रह के नाते मंगल सप्तम केन्द्र का स्वामी होता हुआ अपनी अशुभता को खो देता है और शुभ हो जाता है । इसी कारण से वह मारक नहीं रहता ।

तुलायां जायमानस्य गुरुशुक्रौ समन्वितौ ।

अन्योन्यं वीक्षितौं वापि भौममन्देन वीक्षितौ ॥

कुजभानुजसद्यस्थौ गुरोश्शुक्रांतरेपि वा ।

शुक्रदाये गुरोर्भुक्ति कालेस्पोटव्रणादिकौ ॥। ३, ४ ॥

भावार्थ – तुला लग्न हो और गुरु और शुक्र का पारस्परिक युति अथवा दृष्टि संबन्ध हो और यह दोनों ग्रह मंगल तथा शनि की राशि में स्थित हों, उन पर शनि तथा मंगल की दृष्टि हो, तो शुक्र (दशा गुरु भुक्ति में अथवा गुरु दशा शुक्र भुक्ति) में जातक चेचक अथवा घाव आदि से कष्ट पाता है ।

व्याख्या – तुला लग्न वालों के लिए शुक्र जिसकी मूल त्रिकोण राशि लग्न में पड़ती है, लग्नेश होने से स्वास्थ्य का प्रतिनिधित्व करता है । इसी प्रकार गुरु सुख "कारक" होता हुआ षष्टेश बनता है । सुख कारक षष्टेश भी स्वास्थ्य ही का प्रतिनिधित्व करता है, अतः स्वास्थ्य द्योतक गुरु और शुक्र पर मंगल और शनि के पाप प्रभाव के फलस्वरूप गुरु और शुक्र अपनी-अपनी दशा भुक्ति में स्वास्थ्य संबन्धित अशुभ फल देते हैं। मंगल तो घाव और फोड़े-फुंसी आदि का ग्रह है ही । शनि पंचमेश होने से पित्त का ग्रह बनकर मंगल की सहायता करता हुआ उक्त रोगों को उत्पन्न करेगा ।

तुलायां जायमानस्य व्ययस्थौ भानुसोमजौ।

शनिनावीक्षितौस्या तां मध्यायुर्भाग्यवान् पिता ॥ ५ ॥

भावार्थ – यदि सूर्य और बुध द्वादश स्थान में (कन्या राशि में) स्थित हों और उन पर शनि की दृष्टि हो, तो जातक के पिता की मध्यम आयु होती है । यद्यपि वह घनी होता है।

व्याख्या – द्वादश भाव में स्थित सूर्य बुध पर शनि की दृष्टि तभी पड़ सकती है जब शनि तृतीय, छठे अथवा दसवें भाव में हो। इन तीनों में से किसी भाव में भी स्थित शनि उपचयस्थ होगा और इसीलिए बलवान् होगा ।

पितृ स्थान (नवम) से अष्टमेश होता हुआ और आयु का कारक होता हुआ बलवान् शनि पिता की आयु को दीर्घ करेगा। परन्तु चूंकि इसकी क्रूर दृष्टि पिता के द्योतक नवमेश बुध और नवम कारक सूर्य दोनों पर पड़ेगी, उस दृष्टि के फलस्वरूप पिता की आयु कम होगी।

इस प्रकार अन्नतोगत्वा पिता की आयु मध्यम श्रेणी की हो जावेगी । शनि पिता का नवमेश है, अतः उसकी प्रबलता पिता को भाग्यवान बनावेगी ।

तुलालग्ने तु जातस्य रविस्सौरेर्बुधस्य च ।

कुजस्य यदि संबन्धो बहुभाग्यप्रदो भवेत् ॥ ६॥

भावार्थ – तुला लग्न वालों के सूर्य, शनि, बुध और मंगल यदि एक दूसरे के साथ युति अथवा दृष्टि संबन्ध स्थापित करें, तो जातक बहुत भाग्यशाली होता है।

व्याख्या – इस लग्न वालों का सूर्य लाभेश होने से, शनि राजयोग कारक होने से, बुध भाग्येश होने से और मंगल धनेश होने से सभी धन के प्रतिनिधि होते हैं, अतः उनका पारस्परिक संबन्ध धनप्रद रहता है।

तुला लग्ने तु जातस्य रविस्सौरेर्बुधस्य च ।

कुजस्यवेंदु संबधो राजयोग उदीरितः ॥ ७॥

भावार्थ – यदि सूर्य, शनि और बुध का मंगल अथवा चन्द्र से संबन्ध हो, तो जातक को राजयोग का फल मिलता है ।

व्याख्या – चन्द्र का केन्द्रेश होने के नाते कोणेश शनि. से संबन्ध राजयोग कारक है और मंगल धनेश, बुध नवमेश होने से उस शुभ फल में वृद्धि करेंगे। इसी प्रकार मंगल की युति भी सभी धन और योगप्रद ग्रहों से होगी, जिसका उत्तम फल निकलेगा ।

तुलायां जायमानस्तु शुक्रसूर्यबुधा यदि ।

लग्नस्थाः भाग्यवान् जातः धन वानश्च भव ध्रुवम् ॥ ८ ॥

भावार्थ – यदि तुला लग्न वालों के लग्न में सूर्य, शुक्र और बुध स्थित हों, तो जातक धनी और भाग्यशाली होता है ।

व्याख्या – सूर्य लाभेश होने से, शुक्र लग्नेश होने से और बुध भाग्येश होने से ये सभी धनदायक ग्रह हैं। लग्न भी धनदायक भाव है, अतः इस भाव में स्थित होकर ये सब ग्रह शुभ फल धनादि देने वाले होंगे ।

सौम्य मंदसितादित्याः लग्नस्थाश्चन्द्र भूमिजौ ।

सप्तमस्थो चन्द्रजस्य दशाकाले समागमे ॥

तुलायां चायमानस्तु पुरुषो धनवान् भवेत् ।

भाग्यवांश्च भवत्ये व संशयो नास्तिवं ध्रुवम् ॥ १० ॥

भावार्थ – यदि तुला लग्न में सूर्य शनि, शुक्र और बुध हों और सप्तम भाव में मंगल और चन्द्रमा, तो बुध अपनी दशा में धनादि के संबन्ध में बहुत अच्छा फल देगा ।

व्याख्या – बुध का फल उस पर पड़ने वाले प्रभाव के अनुकूल होता है, चूँकि बुध पर प्रभाव डालने वाले सभी ग्रह शुभ फलदायक हैं, अतः बुध धनादि के संबन्ध में शुभ फल देगा ।

अष्टमे तु गुरुर्भाग्ये मन्दोलाभे कुजेन्दुजौ ।

यदि सन्ति तुलाजातः राजयोग विशेषवान् ॥ ११ ॥

भावार्थ – तुला लग्न वालों के लिये उत्कृष्ट राजयोग की सृष्टि हो जाती है। यदि गुरु अष्टम में, शनि नवम में और मंगल और बुध एकादश भाव में स्थित हों।

व्याख्या – मंगल तुला लग्न वालों के लिये शुभ होता है। इसको प्रमुख उपचय स्थान में मित्र राशि में स्थिति इसको बलवान् करती है और फिर मंगल धन भाव में स्थित निज राशि वृश्चिक को देखता हुआ धन के लिये और भी शुभ हो जावेगा।

बुध का आधिपत्य (नवमेश होना) भी शुभ है और उसने उपरोक्त शुभ मंगल के साथ मिलकर भी शुभ फल ही करना है। बुध यदि शनि अधिष्ठत राशि का स्वामी होकर फल करता है, तो भी शुभ है, क्योंकि शनि राजयोग कारक है ।

जहाँ तक गुरु का संबन्ध है, यह तृतीय और छठे स्थानों का स्वामी है। दोनों अनिष्ट स्थान हैं । अनिष्ट स्थानों का स्वामी होता हुआ एक तीसरे अनिष्ट स्थान अष्टम में स्थित होकर गुरु अनिष्ट की हानि करता हुआ विपरीत राजयोग की सृष्टि द्वारा बहुत अच्छा धन देता है ।

गुरु अष्टम स्थान में न केवल शत्रु राशि में स्थित है बल्कि वह तृतीय से अष्टम और षष्ठ से तृतीय अर्थात् अपने दोनों अनिष्ट स्थानों से अनिष्ट स्थान में पड़ा है, इसलिए भी बहुत पीड़ित होकर अनिष्ट की हानि करता है, यदि ऐसा न भी हो, तो भी गुरु को ग्रन्थकर्त्ता ने तुला लग्न वालों के लिये शुभ माना है । विशेषतया उसकी धन कारक होकर धन स्थान पर शुभ दृष्टि धनोत्पादक सिद्ध होगी ।

षष्ठे वान्त्ये यदि गुरुलंग्ने चन्द्रस्थितो भवेत् ।

शनेदये च संप्राप्ते घटजातो हि योगभाक् ॥ १२ ॥

भावार्थ – यदि तुला लग्न वालों का गुरु छठे या बारहवें भाव में स्थित हो और चन्द्र लग्न में हो, तो शनि की दशा विशेष शुभ फल करती है ।

व्याख्या – ग्रन्थकार ने शनि की स्थिति का उल्लेख नहीं किया। शनि कहीं भी हो, वह शुभ फल ही करेगा, क्योंकि वह यहाँ तो लग्न और चन्द्र लग्न दोनों से केन्द्र और त्रिकोण का स्वामी होने के कारण दुगुना राजयोग कारक है।

गुरु भी उक्त स्थिति में बलवान् होगा, क्योंकि या तो वह छठे भाव (उपचय) में स्वक्षेत्री होगा और धन भाव को देखेगा या निज भाव को देखकर धनकारक रूप से बलवान् होगा ।

तुलायां जायमानस्या मारको लग्नभार्गवः ।

द्वितीये सप्तमेशोऽपि न भौमो मारको भवेत् ॥ १३ ॥

भावार्थ – तुला लग्न वालों के लिये लग्नेश होता हुआ भी शुक्र मारक सिद्ध हो सकता है और मंगल दो कारक भावों, द्वितीय और सप्तम का स्वामी होता हुआ भी मारक नहीं होता ।

व्याख्या – इस लग्न संबन्धी श्लोक संख्या २ में इस बात का उल्लेख किया जा चुका है कि क्यों मंगल तुला लग्न वालों के लिए मारक सिद्ध नहीं होता ।

जहाँ तक शुक्र का सम्बन्ध है, "लग्न भार्गवः " का अर्थ "लग्न में शुक्र" ऐसा नहीं लगाना चाहिये बल्कि "लग्नेश शुक्र" ऐसा अर्थ करना चाहिये

। चूँकि शुक्र लग्नेश और अष्टमेश दोनों बनता है और चूँकि अष्टम और लग्न दोनों आयु से संबन्ध रखते हैं, आयु द्योतक शुक्र अपनी दुर्बल स्थिति द्वारा आयु को हानि पहुँचाकर मारक सिद्ध हो सकता है ।

तुलायां जायमानस्य मन्दो लग्ने स्थितो यदि ।

कर्कटे यदि चन्द्रस्तु राजयोग उदीरितः ॥ १४ ॥

भावार्थ - यदि शनि तुला लग्न में और चन्द्रमा कर्क राशि में स्थित हो, तो जातक राजयोग का सुख पाता है ।

व्याख्या - तुला लग्न में शनि योग कारक रूप से और निज राशियों, मकर और कुंभ से शुभ स्थिति में होने के कारण बहुत शुभ फल करेगा । चन्द्रमा शुभ ग्रह राज्येश होकर उस पर अपना ३/४ प्रभाव डालेगा जिसके फलस्वरूप शनि और भी बलवान् और राज्य और धनप्रद हो जावेगा ।

उक्त स्थिति में 'कारक' योग भी शनि और चन्द्र की परस्पर केन्द्र स्थिति द्वारा बनता है, इसलिये भी उक्त योग शुभ फल में उत्कृष्ट होगा।

तुलाजातस्य मन्देज्य बुधभौमाः घटे यदि ।

राजस्थ राहुदाये पुण्यतीर्थफलम् तु भवेत् ॥ १५ ॥

भावार्थ - यदि शनि, गुरु, बुध और मंगल तुला लग्न में स्थित हों, और राहु दशम भाव में हो, तो राहु अपनी दशा में पुण्य तीर्थ की यात्रा देगा।

व्याख्या - यद्यपि लग्नस्थ ग्रहों की दृष्टि दशम भाव पर पाद मात्र है, पर जब चार ग्रह लग्नस्थ होकर एक ही तथ्य के द्योतक हों, तो स्पष्ट है कि उनकी सम्मिलित दृष्टि का दशम भाव पर बहुत प्रभाव होगा ।

यहाँ गुरु तो धर्म का कारक है और बुध धर्म स्थानाधिपति, मंगल दशम से दशम का स्वामी होता हुआ दशम भाव की भाँति शुभ कर्मों का द्योतक होगा और शनि नवम से नवम भाव का स्वामी होकर धर्म का द्योतक होगा।

इस प्रकार दशमस्थ छाया ग्रह राहु पर दशम भाव का तथा धार्मिक और यज्ञीय प्रभाव पड़ने के कारण राहु अपनी दशा में तीर्थ-स्थान आदि पुण्य कार्यों को देगा ।

वृश्चिक लग्न

वृश्चिके जायमानस्य गुरुसौम्य परस्परम् ।

संबन्धिनो यदि भवेद्विशेष धनयोगदं ॥ १ ॥

भावार्थ - यदि वृश्चिक लग्न हो और गुरु और बुध परस्पर युति अथवा दृष्टि द्वारा संबन्धित हों, तो यह विशेष धनदायक योग बन जाता है ।

व्याख्या - गुरु धनकारक भी है और धनाधिपति भी और साथ ही पंचमेश भी, इसलिये आर्थिक दृष्टि से बहुत शुभ फल देने वाला है। बुध भी शुभ फलदायक है, क्योंकि यह लाभ स्थान (जहाँ इसकी मूल

त्रिकोण राशि पड़ती है) का स्वामी है। दोनों का पारस्परिक संबन्ध उनके सांझे गुण अर्थात् 'धन' की विशेष वृद्धि करेगा ।

तृतीयस्थौ यदि गुरुरौदार्यमधिकं भवेत् ।

सप्तमस्थास्सूर्यसौम्य शुक्रौ यदि बुधस्य च ॥ २ ॥

दशाकाले तु संप्राप्ते वृश्चिकर्क्षे तु जातकः ।

राजयोगं समाप्नोति महतीं कीर्तिमश्नुते ॥ ३ ॥

भावार्थ - यदि तृतीय भाव में मकर में गुरु स्थित हो, तो जातक बहुत उदार होता है । यदि, बुध, सूर्य और शुक्र सप्तम भाव में हो, तो बुध की दशा में जातक बहुत यश और राजयोग को प्राप्त होता है ।

व्याख्या - मकर राशि में तृतीय भाव में गुरु जातक को इसलिए उदार करता है कि गुरु शुभ धार्मिक ग्रह होता हुआ धनाधिपति होकर धर्म भाव को भी देखता है जिससे धन का धर्म से संबन्ध स्थापित हो जाता है। इसी प्रकार गुरु का संबन्ध दोनों बाहुओं तृतीय और एकादश से होकर वाहु द्वारा शुभ व्यय होता है ।

दूसरे योग में सप्तम भाव में सूर्य, शुक्र, बुध वृषभ राशि में हो, तो सूर्य राज्यद्योतक ग्रह स्वयं दशमेश बनकर और भी राज्य का प्रतिनिधित्व करेगा । शुक्र दशम से दशम का स्वामी भी राज्य ही का द्योतक होगा, इसलिये बुध इन दो ग्रहों सूर्य और शुक्र का फल करता हुआ राज्य-प्राप्ति देगा। इसी प्रकार सूर्य यशकारक है और दशम भाव भी,

इसलिए दशमेश और दशम कारक का फल करता हुआ बुध यश तथा ख्याति दिलवायेगा ।

गुरुसौम्यौ पञ्चमस्यौ लाभे चन्द्रो भवेद्यदि ।

बहुभाग्य घनोपेतः कीटजन्मा न संशयः ॥ ४ ॥

भावार्थ – यदि गुरु और बुध पंचम में और चन्द्र एकादश भाव में हो, तो वृश्चिक लग्न में उत्पन्न होने वाला व्यक्ति धनी और भाग्यशाली होता है ।

व्याख्या – गुरु धनकारक और धनेश तथा पंचमेश होकर, बुध लाभेश होकर (लाभ में बुध की मूल त्रिकोण राशि है) और चन्द्र भाग्येश होकर धन का द्योतक है, अतः ये सारे ग्रह एक दूसरे की दशा भुक्ति में धन प्राप्ति का तथा भाग्यशाली होने का अच्छा योग बनाते हैं ।

कीटजातस्य जीवेंधु केतुनो भाग्यगा यदि ।

गुरोर्दशा योगदाही केतोर्दायोव योगदः ॥ ५ ॥

भावार्थ - गुरु, चन्द्र और केतु यदि कर्क राशि में नवम भाव में स्थित हों, तो गुरु की दशा में प्रचुर धनादि की प्राप्ति होती है, परन्तु केतु की दशा साधारण रहती है ।

व्याख्या – गुरु चूँकि लग्न, चन्द्रलग्न और चन्द्रलग्न के स्वामी सभी पर अपना शुभ और धनदायक प्रभाव डालेगा जिसका फल धन की प्रचुरता होगी। केतु भी एक छाया ग्रह के नाते यद्यपि गुरु और चन्द्र का

सम्मिलित शुभ फल करेगा परन्तु स्वतन्त्र रूप से एक पापी ग्रह होने के कारण इसका इतने धनदायक ग्रहों को पीड़ित करना बहुत धन की प्राप्ति में बाधा भी उत्पन्न करेगा, विशेषतया केतु दशा केतु के ही अन्तर में ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

धनु लग्न

धनुर्लग्ने तु जातस्य पञ्चमस्थ शनेर्दशा ।

शुभप्रदायोगदेति वदन्ति विभुदोत्तमाः ॥ १ ॥

भावार्थ – पंचम भाव में मेष राशि में स्थित शनि की दशा में धनादि प्राप्ति का शुभ फल होता है ।

व्याख्या – शनि की मूल त्रिकोण राशि तृतीय भाव में पड़ती है। शनि ने इसलिए मुख्यतया तृतीय भाव का फल करना है। तृतीय पापी भाव है । इस भाव का स्वामी होकर और इस से तृतीय में स्थित होकर शनि निर्बल है । शनि इसलिये भी निर्बल है कि वह अपनी नीच राशि मेष में है और फिर पंचम भाव में भी ।

तृतीयेश का इस प्रकार अतीव निर्बल होना तृतीय भाव की निर्धनता आदि दुर्गुणों का नाश करके बहुत धन प्राप्ति का कारण होगा। इसके अतिरिक्त शनि धन स्थान में पड़ी अपनी राशि मकर को देखेगा जिसके फलस्वरूप धन भाव बलवान् होकर जातक को धनी बनावेगा ।

धनुर्लग्ने तु जातस्य लाभस्थो योगदशनिः ।

इतरक्षे तु जातस्य लाभमन्दो न योगदः ॥ २ ॥

भावार्थ – धनु लग्न हो, तो एकादस्थ शनि बहुत धनादि का देने वाला होता है और कोई लग्न हो, तो एकादशस्थ शनि बहुत धनादि नहीं देता ।

व्याख्या – धनु लग्न वालों का शनि धनेश होकर लाभ भाव में उच्च होता है। धन और लाभ से सम्बन्ध और शनि की उच्चता शुभ फल देगी ही अन्य किसी लग्न में शनि का धन और लाभ से इतना सुन्दर सम्बन्ध स्थापित नहीं हो सकता।

यदि मकर लग्न भी हो तो भी यद्यपि शनि द्वितीयेश होकर एकादश में स्थित होकर धन और लाभ का सम्बन्ध बनाता है, परन्तु एकादश भाव में शनि शत्रु राशि (वृश्चिक) में होने से धनादि की प्राप्ति के बाहुल्य में बहुत कमी करता है ।

धनुर्जस्य भृगु रवि भाग्ये मन्दस्तृतीयगः ।

शनिदये तु भवतो भाग्ययोग धनागमौ ॥ ३ ॥

भावार्थ – सूर्य और शुक्र सिंह राशि में नवम भाव में हों और शनि तृतीय भाव में हो, तो शनि की दशा में जातक को भाग्य और धन दोनों की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – यहाँ भी सादृश्य का सिद्धान्त काम करता है । सूर्य भाग्येश होने से भाग्य और धन का दाता है। शुक्र की मूल त्रिकोण राशि लाभ भाव में पड़ती है, इसलिये वह भी लाभ और धन का दाता है। उधर

तृतीय भाव में शनि भी धनेश होकर आया है, अतः उसमें भी धन का गुण सूर्य और शुक्र के साथ साझा है, अतः शनि धनदायक सूर्य और शुक्र के प्रभाव में आकर अपनी दशा में धन देगा ।

कुंभे भौम रवि राहु सिंहगो बदि तद्धशा ।

काले सरितनम् धनुर्जातस्समश्नुते ॥ ४॥

भावार्थ – धनु लग्न हो, रवि और मंगल कुंभ में हों और राहु नवम भाव में हो, तो राहु की दशा में जातक पुण्य तीर्थों में स्नान करता है ।

व्याख्या – अकेला राहु ही अपनी धर्म भाव में स्थिति के कारण पुण्य स्नान दे सकता है। यहाँ तो उस पर 'आत्म' रूप आध्यात्मिक सूर्य का प्रभाव भी है जोकि नवमेश होकर और भी धार्मिक है ।

इसी प्रकार चूँकि मंगल की मूल त्रिकोण राशि पंचम भाव में पड़ती है जोकि 'भावात् भावम्' के सिद्धान्तानुसार नवम से नवम होने के कारण नवम की भाँति ही धर्म के भाव के रूप में कार्य करेगा, इसलिये राहु पर मंगल का प्रभाव भी पुण्य करवाने वाला होगा ।

मकर लग्न

मकरे जायमानस्य अष्टमस्थो भवेद्बुधः ।

लग्नसंस्थो यदि गुरु शुक्रेण च निरीक्षितः ।

दीर्घायुर्योगमाप्नोति जातस्तत्र न संशयः ।

निर्धनश्च भवेज्जातोद्यत्रापि च न संशयः ॥ १,२ ॥

भावार्थ – यदि मकर लग्न हो, बुध अष्टम भाव में हो और लग्न में स्थित गुरु पर शुक्र की दृष्टि हो, तो जातक दीर्घायु और निर्धनता दोनों को प्राप्त होगा ।

व्याख्या – लग्न और अष्टम भाव दोनों आयु के भाव हैं। दो शुभ ग्रहों गुरु और शुक्र का लग्न पर प्रभाव डालना आयु की वृद्धि का योग बनायेगा। इसी प्रकार एक शुभ ग्रह की अष्टम (आयु) स्थान में स्थिति भी आयु को बढ़ावेगी, परन्तु जहाँ तक धन प्राप्ति का प्रश्न है, बुध की मूल त्रिकोण राशि नवम भाव में है, अतः यह भाग्येश होकर नाश स्थान में जाकर भाग्य का नाश करेगा।

उधर गुरु दो अशुभ भावों अर्थात् द्वादश और तृतीय का स्वामी होकर द्वादश से द्वितीय और तृतीय से एकादश में स्थित होगा और इस प्रकार बुरे भावों को बल देगा, विशेषतया इसलिए भी कि यह योगकारक शुभ ग्रह शुक्र द्वारा भी दृष्ट होगा। इस प्रकार शुभ बुध के निर्बल होने के कारण और अशुभ गुरु के बलवान् होने के कारण निर्धनता का योग बनेगा ।

मकरे जयमानस्य पंचमस्थेद्भृगुश्शुभः ।

राज्यस्वश्चेदभृगुर्योगं न ददाति कदाचन ॥ ३॥

भावार्थ – मकर लग्न हो और शुक्र पंचम भाव में हो, तो शुक्र अपनी दशा में बहुत धनादि देता है, परन्तु वही शुक्र दशम भाव में स्थित हो, तो बहुत घनादि नहीं देता ।

व्याख्या – शुक्र मकर लग्न वालों के लिये राजयोग कारक ग्रह है। यह केन्द्र की अपेक्षा त्रिकोण में स्थित क्यों अधिक शुभ फल देता है ? यह प्रश्न है क्योंकि पंचम और दशम दोनों में यह स्वक्षेत्री होता है।

शुक्र के लिए पंचम में स्थिति उसे बहुत 'दिक् बल' देती है, क्योंकि वह चतुर्थ भाव के समीप है, परन्तु उसकी दशम भाव स्थिति उसके 'दिक् बल' के अभाव की सूचक है, इसलिये फलों में तारतम्य है और पंचमस्थ शुक्र दशमस्थ शुक्र की अपेक्षा अधिक बलवान् है।

मकरे जायमानस्य लग्नस्थौ शुक्रचन्द्रजौ ।

पंचमस्थश्च चन्द्रस्तु गुरुणा वीक्षितो यदि ॥

मंडलाधीश्वरो राज भवध्येव न संशयः ।

भृहज्जातकयोगोऽयं महाराजक संज्ञिकः ॥ ४, ५ ॥

भावार्थ – यदि शुक्र और बुध मकर लग्न में स्थित हों और पंचम भाव में स्थित चन्द्र पर गुरु की दृष्टि हो, तो जातक राजराजेश्वर बनता है। बृहजातक में इसको 'महाराजा' योग कहा है।

व्याख्या – इसमें सन्देह नहीं कि यह एक उत्तम योग है। शुक्र जो मकर लग्न वालों का राजयोग कारक ग्रह है, मित्र राशि में केन्द्र में

अपने मित्र और भाग्येश के साथ और अपनी राशि तुला और वृषभ से शुभ स्थान शुभ स्थान में होगा, होगा, अतः इसको चार चाँद और भी लग जायेंगे।

उधर चन्द्र पंचम भाव में उच्च होगा, सूर्य से प्रायः दूर होगा। अपने शुभ मित्र गुरु से दृष्ट होगा। इस प्रकार लग्न और चन्द्र लग्न और राजयोग कारक ग्रहों और भाग्येश की प्रबलता के कारण धन, भाग्य, शासन, सत्ता सभी की प्राप्ति होगी।

लग्नसंस्थो यदि गुरुर्लाभ शुक्र कुजो यदि ।

गुरुवयि तु संप्राप्ते भ्रातृ मूल धनागमः ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि मकर लग्न हो, लग्न में गुरु और एकादश में मंगल और शुक्र स्थित हों, तो गुरु की दशा में भाई द्वारा धन की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – प्राय: लग्न और दशम भाव को धन प्राप्ति में आय के स्रोत का द्योतक माना गया है । गुरु बड़े भाई का कारक हैं। यह भ्राता स्थान (तृतीय) का स्वामी होकर और धन का कारक होकर जब लग्न में स्थित होगा तब भाइयों से धन प्राप्ति का सूचक होगा ।

इसी प्रकार दशमेश शुक्र का बड़े भाई के स्थान (एकादश) में एकादशेश और वह भी भ्रातृ कारक मंगल से युक्त होना भी भाई द्वारा धन प्राप्ति की सूचक होगी।

अन्दोलिका वाहनां च मकरे जातको नरः ।

लभते नात्र सन्देहस्सूरिभिः परिकीर्तितः ॥ ७॥

भावार्थ – मकर लग्न में उत्पन्न जातक पालकी आदि सुन्दर वाहनों को प्राप्त करता है ।

व्याख्या – यह श्लोक पिछले श्लोक ही का भाग है और उसी श्लोक में वर्णित ग्रहों के फल को कह रहा है। इस वाहन प्राप्ति का कारण स्पष्टतया वाहन स्थानाधिपति मंगल और वाहन कारक शुक्र का प्राप्ति स्थान (एकादश) में बैठना है।

गुरु भी विपरीत राजयोग की सृष्टि करता हुआ धनदायक है, परन्तु मुख्य योग तो मंगल और शुक्र की लाभ-स्थान में युति है।

रविचन्द्र बुधालग्ने व्ययो शुक्र कुजा यदि ।

भ्रातृभाग्यम् स्वभाग्यं च प्राप्नोति मृगजो नरः ॥ ८ ॥

भावार्थ – यदि मकर लग्न में सूर्य, चन्द्र और बुध स्थित हों तथा मंगल और शुक्र द्वादश भाव में स्थित हों, तो स्वयं जातक और उसके भाई भाग्यशाली होते हैं ।

व्याख्या – बुध की मूल त्रिकोण राशि कन्या भाग्य भवन (नवम) में पड़ती है, इसलिए बुध बहुत शुभ फलदायक होगा । नवम भाव की यह शुभता बुध लग्न, सूर्य लग्न और चन्द्र लग्न तीनों को प्रदान कर रहा है जिसके फलस्वरूप निज को भरपूर भाग्य की प्राप्ति हो रही है।

जहाँ तक मंगल की द्वादश स्थिति का प्रश्न है, हमको यह ध्यान रखना है कि मंगल तृतीय भाव से नवम भाव का स्वामी है और भ्रातृ कारक भी। यह तृतीय भाव से दशम में होने के कारण और मित्र राशि में स्थित होने के कारण भाइयों के भाग्य की भी वृद्धि करेगा।

मृगजन्मा मन्दसौम्य भाग्यस्थो भाग्यवान् भवेत् ।

व्ययस्थो राहु जीवौ तु राहुर्योगप्रदो भवेत् ॥ ९ ॥

भावार्थ – मकर लग्न हो, तो शनि और बुध नवम भाव में स्थित होकर भाग्यशाली बनाते हैं और राहु और गुरु द्वादश भाव हों, तो राहु योगप्रद होता है ।

व्याख्या – शनि दो शुभ स्थानों अर्थात् लग्न और द्वितीय का स्वामी होता है। इसकी भाग्य स्थान में स्थिति शुभ और 'मित्र भाग्येश के साथ इसको और भी शुभ बनावेगी । राहु एक छाया ग्रह है, उस पर धनकारक गुरु की युति का प्रभाव है और शनि और बुध की ३/४ दृष्टि का, अतः यह भी अपनी दशा में धनादिदायक सिद्ध होगा ।

मकरे जायमानस्य चन्द्रः कर्कटके स्थितः ।

मकरस्थ धरासूनु राजयोगप्रदो भवेत् ॥ १० ॥

भावार्थ – यदि मकर लग्न में मंगल हो और कर्क में चन्द्रमा, तो राजयोग का फल मिलता है।

व्याख्या – लग्न भाव में एक उच्च ग्रह की स्थिति और फिर उस पर प्रबल चन्द्र की दृष्टि लग्न को बहुत बलवान् बनावेगी । इसी प्रकार प्रबल चन्द्र पर राज योगकारक मंगल (कर्क के लिए) की प्रबल दृष्टि चन्द्र लग्न की उत्कृष्टता की द्योतक है । लग्नों की उत्कृष्टता बहुत धनदायक होती है ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

कुंभ लग्न

कुंभे सिंहे तु जातस्य योगो नैव विशेषकः ।

भाग्यराज्येश सम्बन्धमात्रेणेति विदुरभुधाः ॥ १ ॥

भावार्थ – कुंभ अथवा सिंह लग्न हो, तो नवमेश और दशमेश के दृष्टि युति आदि सम्बन्ध मात्र से विशेष योग की प्राप्ति नहीं होती ।

व्याख्या – महर्षि पाराशर का मौलिक नियम यह है कि यदि केन्द्र और त्रिकोण के स्वामियों का परस्पर युति दृष्टि आदि द्वारा सम्बन्ध हो, तो व्यक्ति को राजयोग की प्राप्ति होती है।

कुंभ लग्न हो, तो मंगल दशमेश और शुक्र नवमेश बनता है और यदि सिंह लग्न हो, तो मंगल नवमेश और शुक्र दशमेश बनता है, इन दोनों लग्नों में किसी भी लग्न के लिए मंगल और शुक्र का पारस्परिक सम्बन्ध विशेष योगप्रद नहीं है ।

कारण कि कुंभ लग्न में दशमेश मंगल दशम के साथ एक बुरे भाव तृतीय का भी स्वामी बन जाता है और सिंह लग्न हो, तो भी शुक्र दशमेश होने के साथ-साथ तृतीयेश हो जाता है । इस प्रकार दोनों दशाओं में दशमेश पापी ग्रह बन जाता है ।

विशेषतया इसलिये भी कि दोनों ही हालतों में दशमेश की मूल त्रिकोण राशि बुरे भाव (तृतीय) में पड़ती है, इसलिए इन लग्न वालों के लिये भाग्येश और राज्येश का पारस्परिक सम्बन्ध विशेष अच्छा नहीं है ।

लग्ने शुक्ररविराज्ये राहुर्वा कुंभसद्मनः ।

गुरुराहुदशाकाले योगदो भवतो ध्रुवम् ॥ २ ॥

भावार्थ - यदि कुंभ लग्न हो, शुक्र लग्न में, सूर्य दशम में और राहु भी लग्न में हो, तो गुरु और राहु अपनी दशा भुक्ति में दोनों "योग" अर्थात् धनादि देते हैं ।

व्याख्या - राहु एक छाया ग्रह के नाते उन ग्रहों आदि का फल करेगा जिनके द्वारा कि वह प्रभावित है। राहु लग्न में शनि की राशि में कुछ शनि का जो लग्नेश है, शुभ फल करेगा और कुछ शुक्र का शुभ फल करेगा जोकि योगकारक होने से बहुत शुभ है।

राहु पर सूर्य का भी काफी प्रभाव है । सूर्य भी राज्य सम्बन्धी शुभ फल करेगा, क्योंकि सूर्य राज्यकारक भी है और दशम से दशम भाव का स्वामी भी । गुरु का आधिपत्य भी अच्छा है, क्योंकि उसकी मूल त्रिकोण राशि धनु लाभ स्थान में पड़ती हैं, इसलिये गुरु भी शुभ फलदायक होगा ।

कुंभे तु जायमानस्य रन्ध्रस्थौ रविभूमिजौ।

तयोर्दाये दुःखदस्या बुधवाये हि योगदः ॥ ३ ॥

भावार्थ – कुंभ लग्न हो और सूर्य और मंगल अष्टम भाव में स्थित हों, तो रवि और मंगल की दशा में दुःख की प्राप्ति होगी और बुध की दशा बहुत धन देगी ।

व्याख्या – मंगल और सूर्य दोनों लग्नेश शनि के शत्रु हैं और नैसर्गिक पापी ग्रह भी, इसलिए वह अपनी दृष्टि द्वारा धन भाव को हानि पहुँचावेंगे, अतः उनकी दशा दुःखप्रद होगी।

परन्तु बुध बहुत अच्छा फल इसलिये करेगा कि वह अष्टमेश है और अष्टम भाव पापी ग्रहों से पीड़ित है । बुरे भाव का पीडित होना उसके स्वामी द्वारा शुभ फलप्रद होता ही है।

घटजातस्य लग्नस्थो गुरुमंदो द्वितीयगः ।

गुरुवाये मिश्रयोगः शनिवायेव योगदः ॥ ४ ॥

भावार्थ – गुरु लग्न मे कुंभ राशि में और शनि द्वितीय भाव में हों, तो गुरु की दशा में मिश्र फल की प्राप्ति होगी और शनि की दशा वहुत अच्छा फल करेगी ।

व्याख्या – गुरु दो धन स्थानों अर्थात् द्वितीय और एकादश का स्वामी होकर तीसरे शुभ स्थान लग्न में स्थित होकर शुभ फलदायक है, परन्तु उसका अपनी एक राशि धनु से तृतीय होना और दूसरी राशि मीन से द्वादश में होना उस शुभता के विरोध में काफी कार्य करेगी, अतः गुरु मिश्र फलदायक है ।

परन्तु शनि की दशा शुभ रहेगी, क्योंकि शनि एक तो लग्नेश है, दूसरे, गुरु अधिष्ठित राशि का स्वामी होने से गुरु का शुभ फल करेगा और तीसरे उसकी धनभाव में स्थिति भी शनि के धनदायक कार्य में सहायक होगी।

शनि के शुभ फल देने में एक और भारी कारण यह भी है कि शनि अपनी द्वादशस्य (बुरे भाव) में मकर राशि से तृतीय होगा और दूसरी राशि कुंभ शुभ भाव से द्वितीय में शुभ होगा ।

कुंभे तु जायमानस्य शनि शुक्रौ तु लाभगौ ।

शुक्रदाये च संप्राप्ते शुक्रो भवति योगदः ॥ ५ ॥

भावार्थ - यदि शनि और शुक्र धनु राशि में एकादश स्थान में हों, शुक्र अपनी दशा में बहुत शुभ फल करता है ।

व्याख्या - शुक्र योगकारक है और फिर अपने मित्र शुभ फलदायक शनि के साथ लाभ स्थान में स्थित है, अतः शुक्र अपनी दशा में शुभ फल करेगा ।

विक्रमस्थास्सूर्य सौम्या जीवश्चेत्सूर्यदायके ।

रविश्शुभप्रदस्सत्यम् कुंभजातस्य राज्यदः ॥ ६ ॥

भावार्थ - यदि तृतीय भाव में मेष राशि में सूर्य, बुध और गुरु हों, तो सूर्य अपनी दशा में धन और राज्य देता है ।

व्याख्या - सूर्य एक पापी ग्रह होकर और सप्तम केन्द्र का स्वामी होकर शुभ है । उसकी शुभता गुरु, जो धनकारक, धनेश और लाभेश है, बढ़ाता है। बुध गुरु के साथ गुरु का रूप होकर सूर्य की शुभता को और बढ़ाता है।

इसके अतिरिक्त सूर्य राज्य सत्ता का द्योतक होता हुआ और दशम से दशम का स्वामी होकर बलवान् है । सप्तम चूँकि दशम से दशम है, अतः सप्तमेश सूर्य राज्य का दुगुना प्रतिनिधि होकर तथा शुभ प्रभाव होकर राज्यसत्ता प्रदान करेगा । कुभ लग्न वालों का सप्तमेश पापी सूर्य शुभ फलदाता होता है ।

मीन लग्न

मीने कुम्भे च जातस्य व्ययशुक्रो न योगदः ।

इतरे जायमानस्य व्ययशुक्र शुभप्रदः ॥ १ ॥

भावार्थ - कुम्भ अथवा मीन लग्न वालों के द्वादश स्थान में स्थित शुक्र योगप्रद नहीं होता, परन्तु दूसरी लग्नों के द्वादश स्थान में स्थित शुक्र योगप्रद होता है ।

व्याख्या - शुक्र एक भोग और विलास का ग्रह है और उधर द्वादश भाव भी भोग-विलास का भाव है, इसलिये साधारणतया शुक्र जब भी द्वादश स्थान में स्थित होता है, भोग-विलास अर्थात् धनादि देता है ।

परन्तु ग्रन्थकार की सम्मति में यह शुक्र की द्वादश स्थिति का शुभ फल मीन और कुम्भ लग्न वालों को नहीं मिलता । कारण यही है कि इन दो लग्नों के द्वादश स्थान में शनि की राशि पड़ती है, चूंकि शनि अभाव और निर्धनता का ग्रह है । उसका स्वभाव शुक्र से भोग आदि के विषय में विरुद्ध है, अतः शुक्र शनि की राशि में द्वादशस्थ अच्छा फल नहीं करता । दूसरी राशियों में द्वादशस्थ शुक्र शुभ फल करता है ।

मीनलग्ने तु जातस्य व्ययमन्दो हि योगदः ।

लग्नात् व्यये स्थितश्चन्द्रो धनहीनो भवेन्नरः ॥ २ ॥

भावार्थ - मीन लग्न हो, तो द्वादश भाव में स्थित शनि शुभ फल करता है और द्वादश भाव में स्थित चन्द्र से जातक निर्धन होता है ।

व्याख्या - मीन लग्न हो, तो शनि एकादश और द्वादश भावों का स्वामी होता है । पाराशरीय नियमों के अनुसार शनि द्वादशेतर राशि का फल करता है अर्थात् एकादश का फल करेगा, इसलिये एकादशेशे एकादश से द्वितीय में स्थित होकर एकादश भाव के लिये शुभ फल करेगा।

परन्तु यदि चन्द्र द्वादश हो, इसका अर्थ हुआ पंचमेश द्वादश में है। पंचमेश का पंचम भाव से अष्टम में जाना और फिर लग्न से व्यय भाव में होना और फिर शत्रु राशि में होना, ये सब बातें चन्द्र की शुभता को

दूर कर उसे अशुभ बनाती हैं, अतः धन और लग्न रूपचन्द्र अपनी निर्बलता से धनहीन करता है, विशेषतया जबकि वह पक्ष बल में भी निर्बल हो ।

मीनलग्ने तु जातस्य गुरोर्दाये समागमे ।

चन्द्रान्तर्भुक्तिकालस्तु पूर्वयोगस्वहुसृदः ॥ ३ ॥

भावार्थ – गत श्लोक में उल्लिखित अशुभ फल न होगा यदि गुरु की दशा में चन्द्र की भुक्ति हो ।

व्याख्या – ग्रन्थकार का आशय यह प्रतीत होता है कि यद्यपि कुम्भ राशि में द्वादश भाव में स्थित चन्द्रमा अशुभ फल करता है, परन्तु यह अशुभ फल गुरु लग्नेश की दशा में नहीं होता । लग्नेश की दशा में चन्द्र की भुक्ति एक लग्नेश की दशा में दुसरे लग्न की भुक्ति होगी, इसलिये क्या यह भुक्ति शुभ न रहेगी ? विषय कुछ अस्पष्ट है, क्योंकि पाठ अस्पष्ट है । कुछ भी हो, हम समझते हैं कि चन्द्र की भुक्ति का फल किसी भी दशा में अशुभ न होगा यदि चन्द्रमा सूर्य से दूर हो और शुभ प्रभाव में हो ।

मीनलग्ने तु जातस्य पञ्चमस्थो गुरुर्यदि ।

स्त्रीसन्तति समृद्धिस्यात् कुत्रचित्पुत्र सन्ततिः ॥ ४॥

भावार्थ – यदि गुरु पंचम भाव में कर्क राशि में स्थित हो, तो जातक को कई पुत्रियों की प्राप्ति होती है, परन्तु कभी कहीं एक पुत्र की प्राप्ति संभव होती है ।

व्याख्या – प्रायः ऐसा होगा कि पंचम भाव पर पाप प्रभाव भी होगा। इस पाप प्रभाव फलस्वरूप पंचम भाव तथा गुरु जो कि पुत्रकारक है, दोनों को हानि पहुँचेगी, जिससे पुत्र का अभाव हो जावेगा ।

यदि शुभ दृष्टि हुई, तो वह दृष्टि शुक्र, चन्द्र अथवा बुध में से एक अथवा अधिक ग्रहों ही की संभव है और ये सारे ग्रह स्त्री संज्ञक हैं, इसलिए इस दशा में एक स्त्री राशि (कर्क) में स्थित हुआ गुरु और स्त्री ग्रहों से दृष्ट स्त्री प्रजा का बाहुल्य करेगा ।

मीनलग्ने तु जातस्य द्वितीये यदि चन्द्रमाः ।

पञ्चमस्यो यदि कुजश्चन्द्रदाये धनागमः ॥ ५ ॥

भावार्थ – द्वितीय भाव में मेष राशि में यदि चन्द्र हो और पंचम भाव में मंगल, तो चन्द्रमा की दशा में धन की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – चन्द्रमा नैसर्गिक रूप से शुभ ग्रह है और यदि यह सूर्य के बहुत समीप न हो, तो शुभ फल ही करता है। ऐसा शुभ चन्द्रमा पंचम त्रिकोण का स्वामी होकर और भी अधिक शुभ होगा ।

और फिर यदि मंगल पंचम भाव में हुआ, तो यह मंगल अधिष्ठित राशि का स्वामी होने के कारण मंगल (द्वितीयेश और भाग्येश) का शुभ फल भी करेगा। ऐसा शुभ चन्द्रमा धन भाव में सादृश्य के सिद्धान्तानुसार और भी अधिक शुभ फल आर्थिक क्षेत्र में करेगा ।

मीने तु जायमानस्य गुरुषष्ठेऽटमे भृगुः ।

भाग्ये शनिश्चन्द्रकुजौ लाभेचोत्कृष्टभाग्यवान् ॥ ६ ॥

भावार्थ – मीन लग्न हो, गुरु छठे, शुक्र आठवें, शनि नवम हो और मंगल और चन्द्रमा एकादश भाव में हों, तो जातक बहुत भाग्यशाली होता है ।

व्याख्या – धन भाव का अपने हो स्वामी मंगल द्वारा तथा दो शुभ ग्रहों शुक्र और गुरु द्वारा दृष्ट होना धन की विशेष वृद्धि करने वाला योग है ।

फिर गुरु और शुक्र लग्न से क्रमशः छठे और आठवें होकर लग्न पर 'अधि' योग बनावेंगे जिसका फल भी धन की प्राप्ति होगा।

इसके अतिरिक्त गुरु की अपना ही राशि धनु पर शुभ दृष्टि दशम और लग्न दोनों भावों की वृद्धि द्वारा भी धनप्रद होगो ।

लाभेश शनि और भाग्येश मंगल का व्यत्यय भी भाग्य प्राप्ति का सुन्दर योग होगा।

इसी प्रकार प्रमुख उपचय स्थान में धनेश, पंचमेश, नवमेश की स्थिति भी धनदायक होगी, अतः इस योग को उत्कृष्ट भाग्य देने वाला योग कहना कोई अतिशयोक्ति नहीं है ।

मीने तु जायमानस्य चन्द्रसौम्यकुजा यदि ।

मकरस्था यदि भवन् धन वाहन योगदाः ॥ ७ ॥

भावार्थ – यदि चन्द्र बुध और मंगल एकादश स्थान में मकर राशि में स्थित हों, तो धन और वाहन की प्राप्ति का योग बनाते हैं ।

व्याख्या – गत श्लोक की व्याख्या में हम देख चुके हैं कि किस प्रकार चन्द्र और मंगल की एकादश भाव में स्थिति धनप्रद है । जब बुध चतुर्मेश की युति उन ग्रहों के साथ लाभ स्थान में होगी, तो धन के साथ-साथ वाहन की की प्राप्ति भी होगी । ध्यान रहे कि चतुर्थेश मंगल की चन्द्र लग्न से युति भी वाहन प्राप्ति का योग बनावेगी ।

मीने जातस्य लग्नस्थो शनिचन्द्रौ च लाभगः ।

फुजष्वष्ठे कविश्शुक्रदाये भाग्य मुदीरितम् ॥ ८ ॥

भावार्थ – यदि मीन लग्न में शनि और चन्द्र हों, मंगल एकादश और शुक्र छठे भाव में हो, तो शुक्र की दशा में बहुत धन की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – शुक्र की मूल त्रिकोण राशि अष्टम स्थान में पड़ती है, अतः मीन लग्न वालों को शुक्र अष्टम भाव का फल करता है । एक अत्यन्त बुरे भाव का स्वामी होकर शुक्र जब एक दूसरे बुरे भाव अर्थात् छठे में स्थित होगा, तो अष्टम भाव की हानि होगी, चूँकि छठे भाव में शुक्र शत्रु राशि (सिंह) में होगा, यह शत्रु राशि में स्थिति अष्टम अष्टमेश के लिये और भी हानिकारक सिद्ध होगी और फिर पापी मंगल की शुक्र पर दृष्टि उसे और भी हानि पहुँचावेगी ।

इस प्रकार दरिद्रता सूचक अष्टमेश के प्रबल रूप से पीड़ित होने के कारण दरिद्रता का सर्वथा नाश होकर प्रचुर धन की, विपरीत राजयोग द्वारा प्राप्ति होगी ।

मीने तु जायमानस्य सोम्यजीवेन्दु भूमिजाः ।

चतुर्थस्था यदि भवन् शुक्रेण रहिता यदि ॥ ९ ॥

तद्दशान्तर्दशाकाले कीर्तिमाप्नोति शाश्वतम् ।

सिंहासनस्थो भवति राजराजो भवेन्नरः ॥ १० ॥

भावार्थ – मीन लग्न हो और बुध, गुरु, चन्द्र और मंगल चतुर्थ भाव में हों, शुक्र उनके साथ न हो, तो उनकी दशा चिरकाल तक कीर्ति देने वाली और राज्य की प्राप्ति करवाने वाली होगी।

व्याख्या – पहली बात तो यह है कि गुरु मंगल और चन्द्र लग्न के सभी मित्र हैं। फिर गुरु की दृष्टि द्वारा दशम और लग्न को जहाँ गुरु की अपनी राशि है, विशेष लाभ पहुँचेगा ।

इसी प्रकार यह लाभ चन्द्र से दशम भाव को भी पहुँचेगा। इस प्रकार लग्न चन्द्र लग्न और उनसे दशम भावों की वृद्धि कीर्ति देगी, क्योंकि कीर्ति की प्राप्ति लग्न दशम और सूर्य की प्रबलता से कही है।

फिर दशम भावों का बलवान् होना राज्यदायक भी रहेगा, क्योंकि दशम भाव राज्य का भी भाव है। शुक्र अष्टमेश है और गुरु मंगल चन्द्र सभी का शत्रु, अतः इसका प्रभाव धन की प्राप्ति में बाधक होगा ।

मीनजातस्य पुंसस्तु लग्नराज्याधिपो गुरुः ।

राज्ये स्थितो यदि भवेद्योगदश्च भवे ध्रुवम् ॥११॥

भावार्थ – मीन लग्न वालों के लिए लग्न और दशम भाव का स्वामी गुरु राज्य भाव में (दशम में) यदि स्थित हो, तो बहुत धन की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – धनकारक गुरु राज्यकृपा कारक भी है। ऐसे गुरु का लग्नेश होकर प्रमुख केन्द्र में स्वक्षेत्री होकर बलवान् होना धनीमानी बनाता ही है ।

मीनजातस्य वृषभे चेन्दुस्सहे रविर्यदि ।

कन्यायां सोमपुत्रस्तु घटे शुक्रो धनुर्गुरुः ॥ १२ ॥

कुम्भे शनिः कुजोलाभे बहुभाग्यमुदीरितम् ।

एकद्विखचराभ्यां वा होनोपूर्वर्क्ष संगमः ॥ १३ ॥

भाग्यवान् गुणवानश्चैव महतीं कीर्तिमश्नुते ।

बृहज्जातकयोगोऽयम् विद्वद्भिः परिकीर्तितः ॥ १४॥

भावार्थ – मीन लग्न हो और चन्द्रमा तीसरे, सूर्य छठे, बुध सातवें, शुक्र आठवें, गुरु दसवें, एकादश में मंगल और द्वादश भाव शनि हो तो वृहद जातक में इस योग का फल भाग्य गुण और कीर्ति लिखा है ।

व्याख्या – सूर्य के छठे होने से तृतीयस्थ चन्द्रमा पक्ष बल में निर्बल न होगा, अतः बली चन्द्र उच्च राशि में स्थित होकर जहाँ पंचम भाव की उत्कृष्टता द्वारा धनदायक होगा वहाँ वह अपनी उत्कृष्टता द्वारा भी धनी बनावेगा । उसकी नवम भाव पर दृष्टि भाग्यशाली बनावेगी।

मंगल दो शुभ भावों अर्थात् द्वितीय और नवम का स्वामी होता हुआ प्रमुख उपचेय में उच्च राशि में स्थित होकर धन और भाग्य की उत्कृष्टता का दायक होगा।

गुरु की उत्कृष्ट फल देने की शक्ति का उल्लेख पिछले श्लोकों में हो चुका है । ऐसे शुभ गुरु की दशम भाव पर प्रभाव का फल यज्ञीय कर्मों की प्राप्ति होगा । स्वक्षेत्री बुध की लग्न पर दृष्टि व्यक्तित्व में बुध के यज्ञीय गुणों का समावेश करेगी।

एकादश भाव का फल देता हुआ शनि द्वादश भाव में वक्री होकर बहुत बलवान् होगा और बहुत लाभ देगा । वक्री ग्रह बलवान् होता है और इसीलिये अपने कारकत्व आदि के संबन्ध में शुभ फल करता है ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

भावार्थ रत्नाकर

आप नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके इस पुस्तक के आनलाईन संस्करण को भी पढ सकते है ।

1. मेष लग्न | वृश्चिक लग्न
2. वृषभ लग्न | तुला लग्न
3. मिथुन लग्न | कन्या लग्न
4. कर्क लग्न | सिंह लग्न
5. धनु लग्न | मीन लग्न
6. मकर लग्न | कुंभ लग्न
7. अध्याय 2 | धन योग | विद्या | खान-पान
8. अध्याय 3 भ्रातृ-भाव |अध्याय 4 वाहन तथा भाग्य | अध्याय 5 शत्रु और रोग
9. अध्याय 6 स्त्री और काम | अध्याय 7 आयु और स्वास्थ्य
10. अध्याय 8 भाग्य योग | अध्याय 9 राज योग
11. अध्याय 10 तीर्थ स्नान | अध्याय 11 मृत्यु योग
12. अध्याय 12 दशा के परिणाम
13. अध्याय 13 साधारण योग | अध्याय 14 ग्रहमालिका योग | अध्याय 15 ग्रहों का आधिपत्य आदि
14. नियम अध्याय

धन योग

धनेशे पञ्चमस्थे च पञ्चमेशो घने यदि ।

धनपे लाभगे वापि लाभेशो धनगो यदि ।

पञ्चमेश पंचमे वा भाग्ये भाग्याधिपो यदि ।

विशेष धन योगाश्चेत्याहुर्जातकको विदाः ॥ १,२ ॥

भावार्थ – यदि द्वितीयेश और पंचमेश में स्थान परिवर्तन हो या द्वितीयेश लाभ भाव में हो या लाभेश द्वितीय स्थान में स्थित हो या पंचमेश और नवमेश क्रमशः पंचम और नवम भाव में हों, तो जातक को विशेष धन की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – इस श्लोक में सादृश्य सिद्धान्त के बहुत से उदाहरण दिये गये हैं । द्वितीय और पंचम दोनों धनदायक भाव हैं, इसलिये इन भावों के स्वामियों का एक दूसरे के भाव में स्थित होना धन प्राप्ति का योग बनावेगा । नवम भाव भी यद्यपि भाग्य और धन का भाव है बल्कि पंचम भाव से अधिक, परन्तु धनेश का व्यत्यय पंचम से धनप्रद कहा है।

नवमेश से धनेश के व्यत्यय का कोई उल्लेख नहीं । कारण, कि यदि यह व्यत्यय लिया जावे, तो धनेश निज भाव द्वितीय से अष्टम होकर धन प्राप्ति को कम कर देगा। इसी प्रकार नवमेश भी नवम से छठे होकर भाग्य में कमी करता ।

सादृश्य के सिद्धान्त को द्वितीय और लाभ दो धन भावों पर भी लागू किया गया है । इसी कारण धनेश के लाभ में होने से या लाभेश के धन स्थान में होने पर धन की प्राप्ति होती है।

श्लोक के अन्तिम भाग से यह बात भी स्पष्ट है कि जब दो भाव एक ही तथ्य के द्योतक हों, तो उनका अपने-अपने भाव में स्वक्षेत्री होना भी उनके साझे गुण की वृद्धि करता है। यहाँ नवम भाग्य भवन है और पंचम नवम से नवम होने के कारण भाग्य ही समझना चाहिये, इसलिये नवमेश और पंचमेश के नवम और पंचम में स्वक्षेत्री होने पर भी भाग्य की प्राप्ति कही ।

धनलाभाधि पत्योधिनयोगम् नवे विना ।

नव पञ्चमेशयोरन्यरेण सहसंगति ॥ ३ ॥

भावार्थ - यदि धनेश और लाभेश, पंचमेश अथवा नवमेश के बिना किसी अन्य भाव के स्वामी से सम्बन्ध स्थापित करें, तो यह धन योग नहीं बनता ।

व्याख्या - ग्रन्थकार ने गुण सादृश्य पर जोर दिया है । यदि धन द्योतक भावों के स्वामियों का अन्य धन द्योतक भावों के स्वामियों से सम्बन्ध न होकर दूसरे किसी भावेश से सम्बन्ध होगा, तो 'धन' रूपी साझे गुण की अनुपथिति में धन की प्राप्ति न हो सकेगी ।

विशेष धनयोगस्य चाभावे व्यस्तिस्वल्पकम् ।

इति देवशमनयो वदंति विभुरोत्तमाः ॥ ४ ॥

भावार्थ – धन की सदृशता न होने पर पारस्परिक योग विशेष धनदायक नहीं रहता ।

व्याख्या – ग्रन्थकार का आशय यह है कि यदि धनेश और लाभेश का पंचमेश और नवमेश को छोकड़र अन्य किसी अच्छे भाव के स्वामी से भी यदि सम्बन्ध हो, तो भी यद्यपि धन की प्राप्ति होगी, पर इतनी नहीं जितनी कि उक्त चार भावों के स्वामियों के परस्पर सम्बन्ध से होगी ।

धन लाभाषिपत्योश्च व्ययेशेन सहस्थितिः ।

सबधो यदि विधेत् धनाधिक्यं न विद्यते ॥ ५ ॥

भावार्थ – यदि द्वितीयेश और लाभेश की युति व्ययेश के साथ हो, तो जातक बहुत धनी न होगा ।

व्याख्या – षष्टेश और अष्टमेश की भाँति द्वादशेश भी कमी और न्यूनता का सूचक है, इसलिये धन द्योतक ग्रहों से द्वादशेश की युति धन में न्यूनता लाती है ।

गुरोश्च धनकारस्य धनाधिपतिना सहा ।

संबन्धश्च बुधेनापि धनयोग उदीरितः ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि गुरु का द्वितीयेश और बुध से युति आदि द्वारा सम्बन्ध हो, तो यह सम्बन्ध धनदायक होता है ।

व्याख्या – यहाँ भी सादृश्य का सिद्धान्त काम करता है। धनाधिपति और धनकारक गुरु दोनों धन के द्योतक हैं। इसलिये इन दोनों का सम्बन्ध धन की वृद्धि का सूचक है। बुध का स्वतन्त्र फल नहीं होता। वह अपनी युति द्वारा द्वितीयेश और गुरु की युति के फल को बढ़ावेगा।

लाभेशो लाभगोवाऽपि लग्नेशो लग्नगो यदि ।

धनेशो धनगश्चैव धनयोग इतीरितः ॥ ७ ॥

भावार्थ – यदि लग्नेश, धनेश और लाभेश अपने-अपने भावों में स्वक्षेत्री हों, तो भी धन की वृद्धि का योग बनता है ।

व्याख्या – ग्रह स्वक्षेत्र में सदा बलवान् होते हैं। यदि धन के द्योतक ग्रह परस्पर सम्बन्धन भी स्थापित कर रहे हों, उनका अपने-अपने धनदायक घरों में स्वक्षेत्री होना भी तो एक से अधिक स्थान पर धन की प्रचुरता की अभिव्यक्ति करता है ।

धनेशो लाभराशीशः उभौ लग्नगतौ यदि ।

धनयोग इति प्रोक्तः बुधैर्जातककोविदैः ॥ ८ ॥

भावार्थ – यदि लाभेश और धनेश दोनों लग्न भाव में स्थित हों, तो भी प्रचुर धन की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – धनेश और लाभेश दोनों धन द्योतक हैं और लग्न भी धन द्योतक है, अतः तीनों का योग साद्दश्य सिद्धान्तानुसार धन की प्रचुरता का योग है।

सर्वेषु भावस्थानेषु तत्त्द्भावादिकारकः ।

विद्यते तस्यभावस्य फलम् स्वल्पमुदीरितम् ॥ ९ ॥

भावार्थ – यदि कोई ग्रह उसी भाव में स्थित हो जिसका कि वह कारक है, तो उस भाव सम्बन्धित फल बहुत कम मिलता है ।

व्याख्या – यह बहुत महत्वपूर्ण श्लोक है। इसका अर्थ बहुत कम समझा जाता है। इस योग के पीछे जो तर्क है उसको समझने की आवश्यकता है।

जब कोई ग्रह उस भाव में हो जिसका कि वह कारक है, तो ऐसी स्थिति में दो ऐसे ज्योतिषपरक अंग इकट्ठे होंगे जोकि किसी एक साझे तथ्य के द्योतक हैं और यदि उन पर किसी एक भी पापी ग्रह का प्रभाव पड़ा, तो उनके साझे तथ्य की हानि होगी। चूंकि संख्या में पापी ग्रह शुभ ग्रहों से अधिक है, इसलिये अधिकतर पाप प्रभाव पड़ता ही है, इसीलिये यह लोकोक्ति प्रसिद्ध है कि “कारको भाव नाशाय" ।

विशेषतया जब गुरु जैसा शुभ ग्रह कारक रूप से अपने कारकत्व वाले भाव मे स्थित होगा, तो यह लोकोक्ति अधिक चरितार्थ होगी, क्योंकि गुरु पर शुभ ग्रहों की दृष्टि की संभावना कम हो जावेगी । जैसे गुरु पंचम भाव में शत्रु राशि में अथवा स्त्री संज्ञक राशि में प्रायः पुत्र के अभाव का सूचक होता है। हाँ, यदि गुरु वक्री होने के कारण बलवान् हो और उसकी दृष्टि से नवमेश भी लाभान्वित होता हो, तो फिर पुत्र प्राप्ति हो जाती है।

अनुभव में आया है कि **कारकत्व वाले भाव में कारक शत्रु राशि में भाव के गुणों का नाश करता है** जैसे

- मंगल छोटे भाइयों का कारक छोटे भाइयों के भाव (तृतीय) में शत्रु राशि में स्थित हुआ छोटे भाइयों के अभाव का सूचक है,
- धनु राशि में सप्तम में शुक्र विवाह में बाधक होगा,
- कुंभ राशि में नवम भाव में सूर्य पिता की आयु को बहुत थोड़ा करेगा।
- इसी प्रकार वृश्चिक राशि में अष्टम भाव में शनि आयु को कम करेगा ।

परन्तु **जब कोई कारक उस भाव में स्थित हो जिसका कि वह कारक है। और मित्र राशि में अथवा स्वक्षेत्र आदि में हो और शुभ दृष्ट हो, तो फिर उस भाव की वृद्धि करेगा** । जैसे मेष राशि में तृतीय भाव में स्थित मंगल गुरु दृष्ट छोटे भाई अवश्य देगा । इसो प्रकार कर्क का चन्द्रमा चतुर्थ भाव में गुरु दृष्ट माता को दीर्घजीवी करता है, इत्यादि ।

सप्तमाधिपतिश्चन्द्रो धनस्थाने स्थितो यदि ।

केवलेन्दुश्च धनगो नष्टद्रव्यागमो भवेत् ॥ १० ॥

भावार्थ – यदि चन्द्र सप्तमेश होकर द्वितीय भाव में अकेला स्थित हो, तो जातक को नष्ट धन की पुनः प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – छठा स्थान चोर का स्थान है, इसलिये सप्तम छठे से द्वितीय होने के कारण चोर का धन हुआ अर्थात् चुराया गया धन हुआ, अतः चन्द्र का द्वितीय भाव जोकि व्यक्ति का अपना संचित धन है, में बेठना चुराये गये धन की पुनः प्राप्ति का द्योतक है ।

इस प्रकार सप्तमेश की सप्तम से अष्टम स्थिति चोर के धन का नाश और उसकी स्वयं को प्राप्ति (पकड़ा जाना) की परिचायक होगी। हाँ, चन्द्र का बलवान् होना आवश्यक होगा ।

निर्धनता के योग

लग्नवाहन भाग्येशाह्यष्टमस्थान संस्थिताः ।

जातो जननमारभ्य महद्दारिद्रमनुते ॥ १ ॥

भावार्थ – यदि लग्न चतुर्थ और नवम भाव स्वामी तीनों अष्टम स्थान में स्थित हों, तो जातक जन्म से ही निर्धन होता है ।

व्याख्या – अष्टम भाव नाश तथा दरिद्रता दोनों का सूचक है, अतः स्पष्ट है कि धन, सुख और भाग्य को दर्शाने वाले ग्रहों का इस स्थान

में आना धनादि के नाश द्वारा निर्धनता की प्राप्ति का सूचक होगा। चूँकि लग्नेश जन्म और जन्मकालीन स्थिति का द्योतक है, उसका इस प्रकार अष्टम में आना जन्म से ही दरिद्रता की प्राप्ति का सूचक होगा ।

धनेशे व्ययभावस्थे व्ययेशो धनगो यदि ।

जातस्य निर्धनो योगो वक्तव्यस्य सदा बुधै ॥ २ ॥

भावार्थ – यदि द्वितीयेश और द्वादशेश में परिवर्तन योग हो, तो जातक की दरिद्रता का सूचक होता है ।

धनेशो व्ययराशौस्यात् व्ययेशे लग्नगे यदि ।

मारक ग्रहसंदृष्टौ निर्धनश्च भवेन्नरः ॥ ३ ॥

भावार्थ - यदि द्वितीयेश द्वादश स्थान में हो और द्वादशेश लग्न में में स्थित होकर दोनों मारकेश द्वारा दृष्ट हो, तो जातक निर्धन होता है।

व्याख्या – द्वादशेश कमी का सूचक है, अतः धन द्योतक ग्रहों अथवा भावों का द्वादशेश से सम्बन्ध दरिद्रता का सूचक है। यह बात हम पहले देख चुके हैं। धन और लग्न दोनों भाव धन के प्रतिनिधि हैं, अतः इनका द्वादश अथवा द्वादशेश से सम्बन्ध दरिद्रता देगा।

मारक ग्रहों की दृष्टि दरिद्रता में सहायक होती है। इसमें कारण संभवतया यही हो कि मारक प्रायः षष्ठेश और अष्टमेश होते हैं जोकि द्वादशेश की भाँति दरिद्रता सूचक हैं। द्वितीयेश और सप्तमेश मारक भी यह कमी लाने का कार्य कर सकते हैं, क्योंकि ये ग्रह अपने में पाप प्रभाव रखते हैं ।

पंचमेश रिपुस्थश्चेद्भाग्येशो रन्ध्रगो यदि ।

मारकग्रह संदृष्टौ निर्धनश्च भवेन्नरः ॥ ४ ॥

भावार्थ - यदि पंचमेश छठे भाव में हो और नवमेश अष्टम में और दोनों मारक ग्रहों द्वारा दृष्ट हों, तो जातक निर्धन होता है।

विद्या

शुक्रश्चतुर्थगो यस्य गानविद्या विशारदः ।

चतुर्थस्थस्सोमसुतो ज्योतिश्शास्त्र विशारदः ॥ १ ॥

भावार्थ - यदि शुक्र चतुर्थ भाव में हो, तो जातक गाने में निपुण होता है और यदि बुध चतुर्थ भाव में हो, तो जातक ज्योतिष शास्त्र निपुण होता है ।

व्याख्या – चतुर्थ भाव मन और उसकी प्रवृत्ति का भाव है। शुक्र संगीत का ग्रह है और बुध गणित और ज्योतिष का, अतः इन ग्रहों का मन से सम्बन्ध होने के कारण इनके विषयों की व्यक्ति को प्राप्ति होती है।

रविर्वा बुधराहुर्वा पंचमस्थानसंस्थिताः ।

ज्योतिर्विद्या प्रवीणस्याद्विषवैद्यवरो भवेत् ॥ २ ॥

भावार्थ – सूर्य, बुध अथवा राहु यदि पंचम भाव में स्थित हों, तो जातक ज्योतिष शास्त्र में प्रवीण तथा विष सम्बन्धी वैद्य होता है ।

व्याख्या – ज्योतिष ग्रन्थों के अध्ययन से आप देखेंगे कि ग्रह त्रिकोण में स्थित हों, तो उनका प्रभाव लग्न पर रहता है। चूंकि सूर्य और राहु दोनों का डॉक्टरी से सम्बन्ध है और राहु का विष से भी, अतः इन ग्रहों का लग्न पर प्रभाव वैद्य अथवा विष वैद्य बना देगा। बुध का प्रभाव व्यक्ति को ज्योतिष शास्त्र की ओर ले जावेगा । इस सन्दर्भ में ध्यान रहे कि राहु अपनी नवम दृष्टि द्वारा भी अपना प्रभाव लग्न पर डालेगा ।

द्वितीयस्थौ रविबुधौ ज्योतिविद्याविशारदः ।

तावेव शनिना दृष्टा गणितज्ञो भवेन्नरः ॥ ३॥

भावार्थ – यदि सूर्य और बुध द्वितीय भाव में स्थित हों, तो जातक ज्योतिष विद्या में निपुण होता है और यदि रवि बुध पर शनि की दृष्टि भी हो, तो व्यक्ति गणित जानने वाला होता है ।

व्याख्या – ज्ञान के कई भाव हैं। वह ज्ञान जो हमें अपने मस्तिष्क के बल पर मिलता है और जिसके हम बुद्धि द्वारा भक्त हैं, उसका सम्बन्ध पंचम भाव से है । वह ज्ञान जिसका अधिकतर सम्बन्ध हमारी भावनाओं (Emotions) से हो, उसका सम्बन्ध चतुर्थ भाव से होता है । वह ज्ञान जो हम छोटी आयु से स्कूल–कॉलिज आदि में प्राप्त करते हैं उसका सम्बन्ध द्वितीय भाव से होता है । सूर्य और बुध सूक्ष्म मेधा के ग्रह हैं, इसलिए इनका सम्बन्ध गणित और ज्योतिष से है । शनि बहुत गंभीर ग्रह है और गणित भी गंभीर है, अतः इसी कारण से सम्भवतः ग्रन्थकार ने शनि की दृष्टि का फल गणित कहा है, परंतु हम समझते हैं कि गणित (Mathematics) का कारक मंगल है |

द्वितीयस्थौ रविकुजौ तर्कशास्त्रविशारदः ।

पञ्चमस्थौ मन्दभानुबुधा वेदान्तपारगः ॥ ४ ॥

भावार्थ – यदि द्वितीय भाव में सूर्य और मंगल हो, तो व्यक्ति तर्क शास्त्र में निपुण होता है । यदि पंचम भाव में शनि सूर्य और बुध हों, तो व्यक्ति वेदान्त शास्त्र में निपुण होता है ।

व्याख्या – सूर्य सूक्ष्म है और मंगल विशेष रूप से तर्कशाली, इसलिये इन दोनों का विद्या स्थान अर्थात् द्वितीय स्थान में होना व्यक्ति को तार्किक (Logician) बनाता है। पंचम भाव 'इट' देवता का भाव है अर्थात् ऐसे विषय का जिसके कि हम दिल से भक्त हैं । सूर्य आत्मा है, बुध, मेधा और शनि दार्शनिक, अतः इनका पंचम भाव में स्थित होना आत्मा को इष्ट बनाकर वेदांत प्रिय बना देता है ।

बुधभानु केन्द्र कोण लाभस्थौ गणको भवेत् ।

द्वितीयस्थौ यदि भृगुः कविताधर्ममश्नुते ॥ ५ ॥

भावार्थ – यदि सूर्य और बुध केन्द्र (१, ४, ७, १० भाव) अथवा कोण (५, ९ भाव) अथवा एकादश भाव स्थित हों तो मनुष्य गणक (Mathematician) होता है। शुक्र यदि द्वितीय भाव में हो, तो मनुष्य कविता करना जानता है ।

व्याख्या – सूर्य सूक्ष्मता का प्रतीक है और बुध हिसाब– किताव का, अतः इनका बलवान् होना अथवा लग्न को प्रभावित करना व्यक्ति को गणित जानने वाला बनाता है । शुक्र कवि है । इसका विद्या स्थान से तथा वाणी के स्थान से सम्बन्ध 'जातक को 'कविता' का ज्ञान देता है ।

संहिकेयः पञ्चमस्थः गूढभावार्थवित्भवेत् ।

चतुर्थस्थ संहिकेयः जनन्यायुष्मती भवेत् ॥ ६॥

भावार्थ – यदि राहु पंचम भाव में हो, तो जातक दूसरों के गूढ़ भावों को भी जानने की क्षमता रखता है । चतुर्थ भाव में राहु माता को दीर्घजीवी बनाता है ।

व्याख्या – 'शनिवत राहु' अर्थात् शनि की भाँति कार्य राहु करता है। इस कहावत के अनुसार राहु यदि चतुर्थ स्थान में मित्र राशि में स्थित हो, तो शनि की भांति यह भी चतुर्थ भाव को कारक माता की आयु बढ़ावेगा।

द्वितीयस्थो यदि गुरुर्वेदवेदांगपारगः ।

स्वोच्चस्वक्षेत्रयुक्तश्चेत्भवेदेवं न संशयः ॥ ७ ॥

भावार्थ – यदि गुरु द्वितीय स्थान में निज क्षेत्र में अथवा अपनी उच्च राशि में स्थित हो, तो जातक वेद-वेदांग में निपुण होता है ।

व्याख्या – देवताओं का गुरु होने के कारण वृहस्पति धर्म-शास्त्र और न्याय-शास्त्र (Law) आदि में निपुण है, अतः यदि वह बलवान् होकर विद्या स्थान (द्वितीय) को प्रभावित करेगा तो अपने गुणों के अनुरूप उक्त विषयों की शिक्षा जातक को देगा ।

सभा पूज्यश्च संपूर्ण विद्यावान् भवति ध्रुवम्।

वास्थान पोवापतित्व केन्द्रकोणेषु संस्थितौ ।

सर्वविद्या प्रवीणस्यात्सभापूज्यो न संशयः ॥ ८ ॥

भावार्थ – यदि द्वितीयेश और गुरु केन्द्र अथवा कोण में स्थित हों, तो जातक को हर प्रकार की विद्या की प्राप्ति होती है और वह सभा में आदर पाता है ।

व्याख्या – द्वितीय भाव विद्या का है और गुरु ज्ञानी ग्रह है। इन दोनों का इकट्ठा होना और फिर केन्द्र आदि स्थिति द्वारा लग्न को प्रभावित करना जातक में हर प्रकार की विद्या और ज्ञान को लाना है ।

द्वितीय स्थान वाणी और वाणी की प्रयोगशाला अर्थात् 'सभा' का है। उधर बुध और गुरु दोनों भाषण देने में प्रवीण हैं, अतः वाणी के द्योतकों का बलवान् होकर लग्न को प्रभावित करना व्यक्ति में भाषण शक्ति की अधिकता के कारण उसे सभाओं में आदर दिलावेगा ।

द्वितीयस्थो यदि कुजस्तर्कशास्त्रविशारदः ।

तव च भवेदिन्दुः सूत्रतो यजको भवेत् ॥ ६॥

भावार्थ – द्वितीय स्थान में मंगल व्यक्ति को तर्क शास्त्र (Logic) में प्रवीण करता है। उसी द्वितीय स्थान में यदि चन्द्रमा स्थित हो, तो भक्ति यज्ञ आदि करने वाला कर्मकाण्डी होता है।

द्वितीयस्थो यदि भृगुः काव्यालंकार शास्त्रवान् ।

तवस्याद्यदि शनिर्मूढो दुष्टो भवेद्र बम् ॥ १०॥

भावार्थ - यदि शुक्र द्वितीय में हो, तो कविता तथा अलंकार शास्त्र को जानने वाला होता है । यदि उस स्थान में शनि हो, तो मूढ़, दुष्ट होता है ।

व्याख्या – शुक्र कविता, अलंकार, आभूषण तथा अन्य विलास की सामग्री का कारक है, अतः इसका विद्या स्थान बैठना कविता, अलंकार आदि के विषय में ज्ञान देता है ।

शनि प्रकाश का विरोधी विद्या से दूर रहने वाला है, अतः वह अधिक न पढ़ने देगा और इसीलिये दुष्ट कार्यों में प्रवृत्ति भी करा देगा । उसका प्रभाव चतुर्थ भाव अर्थात् मन पर भी पड़ेगा जिसमे मन में शनि के दुष्ट गुण आ जायेंगे ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

खान-पान

तृतीयस्थो भवेन्मन्दः तृतीयेशयुतोपि वा ।

पश्यन्नपि तृतीयं च कट्वाम्लद्रव्यभुक्भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ - यदि शनि तृतीय भाव में हो, तृतीयेश के साथ हो अथवा तृतीय को देखता हो, तो जातक कड़वे और खट्टे पदार्थों के खाने वाला होता है ।

तृतीये तु स्थितो भौमः उष्णद्रव्यप्रियो भवेत् ।

तत्र स्थितो वाक्पतिश्चेत्सात्विक द्रव्य भुक्भवेत् ॥ २ ॥

भावार्थ - यदि मंगल तृतीय भाव में हो, तो जातक गर्म वस्तुओं को खाना चाहता है, यदि तृतीय में गुरु हो, तो वह सात्विक पदार्थों को खाता है ।

व्याख्या - मंगल अग्निमय है, अतः यह अपने अनुकूल पदार्थों का सेवन करवाता है । इसी प्रकार गुरु इस भाव में सात्विक पदार्थ खिलाता है, क्योंकि गुरु स्वयं महान् सात्विक ग्रह है ।

द्वितीये यदि शुक्रस्य तांबूलादिप्रियो भवेत् ।

व्यभिचार रतश्चासीतत्रस्थो यदि भार्गवः ॥ ३ ॥

भावार्थ – द्वितीय भाव में यदि शुक्र स्थित हो, तो जातक तांबूल आदि विलास द्योतक खाद्य–पदार्थों का सेवन करता है और व्यभिचार में रत होगा ।

व्याख्या – विलासप्रिय शुक्र खान–पान के खाने में खाने–पीने की वस्तुओं को विलासात्मक बना डाले, यह बात सहज ही में समझी जा सकती है। शुक्र स्त्री भोग से भी सम्बन्धित है। और द्वितीय स्थान का भी स्त्री से तथा विवाह से घनिष्ठ सम्बन्ध है ।

धनेशे लाभ राशिस्ये लाभेशे धनराशिगे ।

अब्बे त्रयोदशे प्राप्ते विवाहं लभते नरः ॥

भावार्थ – यदि द्वितीयेश और एकादशेश में व्यत्यय हो, तो विवाह १३ वर्ष की आयु में हो जाता है । यहाँ सप्तम भाव का कोई उल्लेख नही, अतः व्यभिचारी होने की भी सम्भावना हो सकती है।

द्वितीयस्थो यदि शनिमंन्दवाग्लोभवान् भवेत् ।

द्वितीयस्थो केतु गुरु वा चतु निपुणो भवेत् ॥ ४ ॥

भावार्थ – द्वितीय भाव में शनि हो, तो जातक कठोर बोलने वाला तथा थोड़ा बोलने वाला हो। यदि इस स्थान में केतु अथवा गुरू हो, तो चतुर होता है ।

व्याख्या – शनि मन्द गति से चलने वाला, अभावात्मक तथा दुष्ट ग्रह है, इसलिए यह वाणी में भी धीरे अथवा थोड़ा अथवा एक–एक कर बोलने अथवा कठोर बोलने की प्रवृत्ति उत्पन्न करेगा । केतु मंगलवत् तर्कशील है और गुरु तो ज्ञानी है ही, अतः यह दो ग्रह द्वितीय भाव में स्थित होकर व्यक्ति को चतुर बनाते हैं ।

भानु भौमो द्वितीयस्थो वाक्क्षुकाठिन्यमुच्यते ।

द्वितीये संस्थितश्चेन्दुर्वाक्क्षु संभ्रम उच्यते ॥ ५ ॥

भावार्थ – यदि द्वितीय भाव में सूर्य और मंगल स्थित हों, तो जातक की वाणी में कठोरता होती है और यदि इस भाव में चन्द्रमा स्थित हो, तो जातक की वाणी भ्रमात्मक होती है।

व्याख्या – सूर्य में प्रतिभा है और मंगल में शक्ति । इसलिए वाणी पर इन ग्रहों का प्रभाव वाणी को अधिकारपूर्वक कठोरता देता है ।

चन्द्र का चूँकि आकांक्षाओं आदि मन के धर्मों से सम्बन्ध है, चन्द्र की द्वितीय भाव में स्थिति (विशेषतया निर्बल चन्द्र की) वाणी में अस्थिरता और भ्रम उत्पन्न करेगी ।

द्वितीयस्थस्सोमसुतो युक्तियुक्तं वचो भवेत् ।

तत्रैव संस्थितो राहुः वाक्क्षुदीनत्वमुच्यते ॥ ६ ॥

भावार्थ – बुध द्वितीय भाव में हो, तो जातक युक्तियुक्त वाणी बोलता है। यदि वहाँ राहु स्थित हो, तो उसके वचनों से दीनता टपकती है ।

व्याख्या – बुध वाणी का कारक है और शास्त्रों में निपुण है, अत: वह वाणी को युक्तियुक्त ज्ञानमय बनाता है। राहु चतुर परन्तु चालाक है । यह मनुष्य की वाणी को अपने अनुरूप चातुर्ययुक्त (परन्तु स्वार्थपरक) बनाता है ।

द्वितीयस्थो यदि कविः क्षीरभक्ष्यादि भुक्भवेत् ।

तत्रस्थो राहु केतू वं समयोचित भुक्भवेत् ॥ ७ ॥

भावार्थ – द्वितीय स्थान में यदि शुक्र हो, तो जातक खीर (दूध में बने चावल) खाने वाला होता है । यदि वहाँ राहु केतु हों, तो वह समयानुसार अच्छा-बुरा सभी खाने वाला होगा।

व्याख्या – शुक्र जलीय और सुसंस्कृत प्रकृति का है, इसलिये यह खाद्य पदार्थों को भी अपने अनुरूप खीर आदि के रूप में सेवन करवाता है। राहु केतु राक्षसी भोजन प्रिय है, अतः ये मद्य मास आदि का सेवन देते हैं ।

द्वितीयस्थो यदि शनिः शूद्रान्नं कुत्सितो धनम् ।

उच्छिष्टान्नं च श्राद्धान्नं जातोह्यत्ति न संशयः ॥ ८ ॥

भावार्थ – द्वितीय भाव में यदि शनि स्थित हो, तो जातक घटिया कीमत का, घटिया दरजे का जूठा और दान में पाया हुआ अन्न खाता है ।

व्याख्या – शनि प्रत्येक क्षेत्र में निम्न श्रेणी का है, अतः यह खाद्य-पदार्थों को भी अपने अनुकूल निम्न श्रेणी का बनाता है।

भ्रातृ-भाव

भ्रातृस्थानेश्वरस्यापि भ्रातृणां कारकेण वै।

कूजेन सह संबन्धे भ्रातृ द्विस्वीरिता ॥ १ ॥

भावार्थ – यदि तृतीय भाव का स्वामी भ्रातृकारक मंगल के साथ युति अथवा दृष्टि से सम्बन्धित हो, तो भाइयों की संख्या आदि की वृद्धि का सूचक है।

व्याख्या – तृतीयेश और तृतीय कारक की युति मात्र से भाइयों की वृद्धि नहीं होती, उनका बलवान् होना भी आवश्यक है ।

विक्रमे विक्रमाधीश रविभूमिसुतास्थिताः ।

भवेद्यदि हि जातस्तु साहसी धीर उच्यते ॥ २ ॥

भावार्थ - यदि तृतीय स्थान में तृतीयेश सूर्य और मंगल हो, तो जातक धैर्यवान् और साहसी होता है।

व्याख्या - बाहु स्थान होने से तृतीय स्थान पराक्रम का भी स्थान है। सूर्य और मंगल पराक्रमी ग्रह हैं । तृतीय भाव और उसके स्वामी से सूर्य और मंगल की युति जातक को साहसी और धीर बनाती है ।

राहुकेतु तृतीयस्थौ जातस्साहसिको भवेत् ।

तत्रैव स्यात्सोमसुतो धैर्यहीनो भवेन्नरः ॥ ३ ॥

भावार्थ - यदि केवल राहु अथवा केतु तृतीय स्थान में हों, तो जातक साहसयुक्त होता है । यदि वहाँ पर बुध भी हो, तो जातक धैर्यहीन होता है।

व्याख्या - पापी ग्रह यदि तृतीय स्थान में बलवान् होकर पड़े हों तो जातक को धैर्यवान् बनाते हैं। परन्तु राहु और बुध वहाँ पर हों तो व्यक्ति धैर्यहीन होता है, कारण कि बुध नपुंसक ग्रह है ।

बलहीने भ्रातृभावे संबन्धो गुरुभौमयोः ।

अस्तिचेत्भ्रातृ बहुलं वक्तव्यं विदुषोत्तमः ॥ ४ ॥

भावार्थ – यदि तृतीय भाव बलहीन् हो परन्तु गुरु और मंगल में युति दृष्टि आदि द्वारा सम्बन्ध हो, तो भाइयों की संख्या अधिक कहनी चाहिए।

व्याख्या – भाइयों की संख्या न केवल तृतीय भाव और उसके स्वामी की प्रबलता आदि पर निर्भर करती है वल्कि भ्रातृकारक मंगल पर भी । यदि मंगल पर गुरु का (पुरुष द्योतक) प्रभाव हो, तो भी भाई अधिक होंगे।

लाभस्यो यदि देवेभ्यः ज्येष्ठ भ्रातुस्तु दुःखदः ।

लाभे च संस्थितो भौमः शनिना वीक्षितो यदि ॥

भ्रातृणां ज्येष्ठसंज्ञानां ह्यभावः प्रोच्यते बुधैः ।

वष्ठाष्टमे भ्रात्रषीशः भ्रात्रारिष्टं तु कम्यते ॥ ५, ६ ॥

भावार्थ – यदि गुरु एकादश भाव में हो, तो बड़े भाई को दुःखी करता है। यदि मंगल एकादश में हो और शनि से दृष्ट हो, तो बड़े भाइयों का अभाव कहना चाहिए। यदि तृतीय भाव का स्वामी छठे अथवा आठवें भाव में हो तो भाइयों को जीवन का भय समझना चाहिए ।

व्याख्या – गुरु यदि एकादश भाव में हो, तो प्रायः बड़े भाई को दुःख होता है। कारण यह कि थोड़ा-बहुत पाप प्रभाव तो प्रायः एकादश भाव पर रहेगा ही। जिसके कारण एकादश भाव और उसका कारक गुरु दोनों पीड़ित होंगे और फल बड़े भाई के लिए दुःख होगा । परन्तु जब गुरु की एकादश स्थिति के अतिरिक्त उस भाव पर मंगल और

शनि का पाप प्रभाव भी हो, तो निश्चय से बड़े भाई का अभाव कहना चाहिए।

क्षत्रियाणां जातकेतु राज्येशे विक्रमे यदि ।

राजयोगस्य न्यूनं हि भवत्येव न संशयः ॥ ७ ॥

भावार्थ - यदि राजा आदि राजनैतिक सत्ताधारियों का दशमेश तृतीय भाव में हो, तो उनके अधिकारों में बहुत न्यूनता आ जाती है ।

व्याख्या - छठा भाव उस भाव के लिए सदा अभाव तथा कमी का सूचक है जिससे कि वह छठा है। इस प्रकार कुण्डली का तृतीय भाव दशम के लिए कमी और अभाव का घर होगा, अतः राज्य द्योतक दशमेश का अपने से छठे तृतीय भाव में जाना राज्य की न्यूनता का द्योतक होगा।

घनादिपतिना भ्रातृनायकस्य सहस्थितिः ।

औदार्यतस्य वक्तव्यं जातकस्य बुधोत्तमः ॥ ८ ॥

भावार्थ - यदि तृतीयेश धनेश से युक्त हो, तो जातक उदार (दानी) होता है।

व्याख्या - तृतीय भाव बाहु भाव है, अतः यह भाव निज का तथा सोच-समझ कर अथवा जानबूझ कर किए निज कार्यो का द्योतक है । इस भाव के स्वामी का धनेश से जुड़ना धन का स्वतन्त्रता से अपनी इच्छा से होने की दशा में यह दान व्यय करना है, अतः शुभ व्यय का

रूप ले लेगा। वैसे भी तृतीय भाव दूसरे से दूसरा होने के कारण धन भाव की भाँति कार्य कर सकता है ।

घन भ्रातृपतिभ्यां वा संबन्धस्सूर्यजस्यहि ।

बहुलौभ्यं हि वक्तव्यं जातकस्य सदा बुधैः ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि शनि का युति अथवा दृष्टि सम्बन्ध धनेश और तृतीयेश दोनों से हो, तो जातक बहुत लोभी होता है ।

व्याख्या – शनि एक स्वार्थपरक लोभी ग्रह है । स्पष्ट है कि इसका धन द्योतक भावों पर प्रभाव व्यक्ति को धन के विषय में लोभी बनावेगा । यहाँ दूसरा और दूसरे से दूसरा अर्थात् तीसरा भाव दोनों धन द्योतक होने से शनि के प्रभाव में आकर व्यक्ति को लोभी बनावेंगे ।

षष्ठाष्टमव्यये भ्रातृनायको यदि संस्थितः ।

तत्रैव शुभसंयुक्ते ह्यरिष्टंतु चिरात्भवेत् ॥ १० ॥

भावार्थ – यदि तृतीय भाव का स्वामी छठे, आठवें अथवा बारहवें भाव में हो परन्तु शुभ ग्रह से युक्त हो, तो भाई को जीवन का भय होता है परन्तु देर से ।

व्याख्या – तृतीयेश की दुष्ट स्थिति से उत्पन्न होने वाला जीवन को भय शुभ ग्रह के योग से हट नहीं जाता । परन्तु केवल पीछे अर्थात् देर से भोगना पड़ता है । यही ग्रन्थकार का अभिप्राय प्रतीत होता है ।

वाहन तथा भाग्य

भाग्येशो वाहनेशश्च तावुभौ लग्नगौ यदि ।

भाग्यवाहन योगोऽयमित्याहुर्गण कोत्तमाः ॥ १ ॥

भावार्थ – यदि चतुर्थेश और नवमेश मिलकर लग्न में स्थित हों, तो

जातक को वाहन और भाग्य की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – लग्न अपने आपका घर अथवा भाव है । उसमें वाहन भाव के स्वामी और भाग्य भाव के स्वामियों का आना अपने आप (Self) को वाहन और भाग्य की प्राप्ति का सूचक होगा ।

सुखस्थानं गतो वापि पश्यन्नपि गुरुमंदि ।

बहुसख्यमवाप्नोति जातस्तत्र न संशयः ॥ २ ॥

भावार्थ – यदि गुरु चतुर्थ भाव को देखे अथवा उसमें स्थित हो, तो जातक को बहुत सुख की प्राप्ति होती है ।

चतुर्थेश गुरु यत्र केन्द्रकोणेषु संगतौ ।

स्थितौ चेत्सुखमाप्नोति जातस्तत्र न संशयः ॥ ३ ॥

भावार्थ – यदि चतुर्थ भाव का स्वामी और गुरु किसी केन्द्र अथवा त्रिकोण स्थान में इकट्ठे हों, तो जातक सुखी जीवन पाता है ।

वाहनेशेन संयुक्तः कारको वाहनस्य तु ।

एकौ स्थियौ वाहनेचेतु स्वल्पवाहन मुच्यते ॥ ४ ॥

भावार्थ – यदि वाहन कारक शुक्र चतुर्थ भाव के स्वामी के साथ चतुर्थ भाव में स्थित हो, तो थोड़े वाहन की प्राप्ति कहनी चाहिए ।

व्याख्या – हम समझते हैं कि इतनी बात और है कि वाहन की प्राप्ति में कमी तब होगी यदि उक्त युति पर पाप प्रभाव हो ।

वाहनाधिप शुक्रौ तु लाभे वा भाग्यभेऽपिवा ।

राज्ये वा संस्थितौ वाऽपि वाहन प्रबलप्रदो ॥ ५ ॥

भावार्थ - यदि चतुर्थ भाव का स्वामी और शुक्र दोनों एकादश, नवम अथवा दशम भाव में स्थित हों, तो विशेष रूप से वाहन की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या - यहाँ भी भाव के स्वामी और उसी भाव के कारक के वलवान् होने के कारण उस भाव सम्वन्धित फल को शुभ कहा गया है।

वाहनाधिपतेर्यस्तु संबन्धो विधुना यदि ।

अश्ववाहन योगोऽयमित्युक्तो गणिकोत्तमैः ॥ ६॥

भावार्थ - यदि चतुर्थ भाव के स्वामी का युति अथवा दृष्टि आदि द्वारा से चन्द्रमा सम्बन्ध हो तो टांगा आदि ऐसे वाहन की प्राप्ति होती है जिसमें अश्व का उपयोग होता है ।

बुधशुक्रौ चतुर्थेतु कक जातस्य संस्थितौ ।

बुधदाये भृगोरन्तर्दशायां वाहनं भवेत् ॥ ७ ॥

भावार्थ - कर्क लग्न हो और बुध शुक्र चतुर्थ भाव में स्थित हो, तो बुध की दशा में और शुक्र की भुक्ति में वाहन की प्राप्ति कहनी चाहिए ।

व्याख्या - यहाँ चूँकि दशा और भुक्ति दोनों का सम्बन्ध चतुर्थ भाव से है, इसलिए चतुर्थ भाव सम्बन्धित घटना हुई । बुध वाहन कारक शुक्र के प्रभाव में है, अतः वाहन सम्बन्धित घटना हुई ।

अश्ववाहन कर्तास्याच्चतुर्थ स्थो गुरुर्भवेत् ।

सप्तमस्थे भवेच्छुक्रः अतिकामुक उच्यते ॥ ८ ॥

भावार्थ - चतुर्थ भाव में स्थित गुरु घोड़े की सवारी को प्राप्ति करवाता है । शुक्र यदि सप्तम स्थान में स्थित हो, तो जातक बहुत कामातुर होता है।

व्याख्या - गुरु की मूल त्रिकोण राशि की बनावट में ही अश्व है, अतः धनु के स्वामी गुरु का 'घोड़ा' से कारक रूप में सम्बन्ध है, इसीलिए वाहन स्थान में गुरु की स्थिति से घोड़े के वाहन की प्राप्ति कही है। शुक्र और सप्तम भाव दोनों 'काम' हैं। दोनों की युति कामप्रद है ।

चतुर्थस्याद्यदि शनिः परदेशेन वसत्यसौ ।

छिद्रग्रहेषु वसति काठिन्यहृदयो भवेत् ॥ ९ ॥

भावार्थ - शनि यदि चतुर्थ भाव में स्थित हो, तो जातक अपने जन्म-स्थान में न रहकर परदेश में बसता है । फिर वह ऐसे मकान में रहता है जो टूटा-फूटा और पुराना होता है। ऐसा व्यक्ति कठोर हृदय का भी होता है ।

व्याख्या - शनि एक पृथकताजनक ग्रह है । यह जिस भावादि को प्रभावित करता है उससे जातक को पृथक् अथवा दूर कर देता है । निवास स्थान पर यहाँ शनि का प्रभाव है, इसलिए जातक जन्म-स्थान में न रहकर अन्यत्र रहेगा ।

घर का आकार - प्रकार उस पर पड़ने वाले शनि के रूप के अनुरूप होगा। शनि चूंकि पुराना और दरिद्री ग्रह है, इसलिए मकान पुराना और टूटा-फूटा है।

वाहनाधिपतिर्भाग्ये भाग्येशो वाहने यदि ।

भाग्यवाहन योगोऽयमिति तज्ज्ञा वदन्ति हि ।। १० ॥

भावार्थ - यदि चतुर्थेश नवम स्थान में और नवमेश चतुर्थ स्थान में हो, तो भाग्यवाहन योग होता है ऐसा ज्योतिष शास्त्र के मर्मज्ञों ने कहा है ।

वाहनाधिपतिर्लाभ लाभेशो वाहने यदि ।

भाग्यवाहन योगोऽयमिति तज्ज्ञा वदन्ति हि ॥ ११ ॥

भावार्थ - यदि चतुर्थेश लाभ स्थान में और लाभेश चतुर्थ स्थान में हो, तो भी भाग्यवाहन योग होता है ऐसा विद्वानों का मत है ।

वाहनेशः पञ्चमस्थः पञ्चमे वाहनाधिपः ।

भाग्यवाहन योगोऽयमिति तज्ज्ञा वदन्ति हि ॥ १२ ॥

भावार्थ – यदि चतुर्थेश पञ्चम स्थान में हो तथा पञ्चमेश वाहन स्थान में हो, तो भी भाग्यवाहन योग होता है ऐसा आचार्यों ने कहा है ।

वाहनाधिपतिर्लग्ने लग्नेशो वाहने यदि ।

भाग्यवाहन योगोऽयमित्यूचुर्गणकोत्तमाः ॥ १३ ॥

भावार्थ – यदि चतुर्थ भाव का स्वामी लग्न में हो और लग्न का स्वामी चतुर्थ भाव में हो, तो जातक को वाहन की प्राप्ति होती है और वह भाग्यशाली होता है ।

व्याख्या – चूंकि लग्न मनुष्य का अपना आप (Self) होता है उसका उक्त व्यत्यय (Exchange) द्वारा वाहन देना युक्त ही है। जातक भाग्यशाली इसलिये कि केन्द्र और कोण के परस्पर सम्बन्ध से वह धनी भी होगा ।

पञ्चमाधिपतिर्भाग्ये भाग्येशः पञ्चमे यदि ।

भाग्यवाहन योगोऽयमिति तज्ज्ञा वदन्ति हि ॥ १४ ॥

भावार्थ – पंचम और नवम भाव के स्वामियों का परिवर्तन भाग्य और वाहन की प्राप्ति का सूचक है ।

व्याख्या – नवम से नवम होने के कारण, भावात् भावम् के सिद्धान्तानुसार पंचम भाव भी नवम की भाँति भाग्य के भाव के रूप में काम करता है, अतः पंचम और नवम भावों के स्वामियों का स्थान परिवर्तन 'साद्दश्य' सिद्धांत के अनुसार 'भाग्य' की वृद्धि करेगा। जहाँ बहुत अच्छा भाग्य हो, वाहन की प्राप्ति तो प्रायः होती ही है।

पञ्चमाधिपतिर्लाभ पञ्चमस्थोहि लाभपः ।

भाग्यवाहन योगोऽयमिति तज्ज्ञा वदन्ति हि ॥ १५ ॥

भावार्थ – पांचवें और ग्यारहवें भाव के स्वामियों का स्थान परिवर्तन भाग्य और वाहन दोनों की प्राप्ति करवाता है ।

व्याख्या – यहाँ भी पंचम और एकादश दोनों भाव आय के द्योतक हैं। आय के उत्तम होने से जहाँ भाग्य की प्राप्ति है, वहाँ वाहन की प्राय: स्वतः ही है ।

वाहनेशो वाहनस्थः पञ्चमे पञ्चमेश्वरः ।

भाग्यवाहन योगोऽयमिति तज्ज्ञा वदन्ति हि ॥ १६ ॥

भावार्थ – चतुर्थ भाव का स्वामी यदि चतुर्थ में हो और पाँचवें का स्वामी पांचवें में, तो भी यह योग वाहन की प्राप्ति का सूचक है।

व्याख्या – सुखेश की स्वक्षेत्री स्थिति सुख को और पंचमेश की स्वक्षेत्री स्थिति भाग्य को देगी जिसके फलस्वरूप वाहनादि की प्राप्ति हो ही जावेगी ।

भाग्याषिपो भाग्येस्यात् लग्नेशो लग्नगो यदि ।

भाग्यवाहन योगोऽयमिति तज्ञा वदन्ति हि ॥ १७ ॥

भावार्थ – यदि भाग्य और लग्न के स्वामी भाग्य और लग्न भाव में स्वक्षेत्री हों, तो भी भाग्य और वाहन की प्राप्ति होती है ।

पञ्चमाधिपतिर्भाग्ये राज्ये वा भाग्यनायकः ।

भाग्यवाहन योगोऽयमिति तज्ञा वदन्ति हि ॥ १८ ॥

भावार्थ – यदि पाँचवें भाव का स्वामी नवम भाव में हो और नवम भाव का स्वामी दशम में हो, तो यह भी भाग्य और वाहन की प्राप्ति का योग है ।

व्याख्या – उक्त योग द्वारा पंचमेश और नवमेश दोनों बलवान् हो जावेंगे जिसका स्पष्ट अर्थ उत्तम भाग्य की प्राप्ति है । उत्तम भाग्य वाहन देता ही है।

पञ्चमस्याधिपतिना संबंधो यदि विद्यते ।

पुत्रकारक जीवस्य पुत्रप्राबल्यमादिशेत् ॥ १९ ॥

भावार्थ – यदि पुत्रकारक गुरु का पंचमेश के साथ सम्बन्ध हो, तो पुत्र प्राप्ति का प्रबल योग कहना चाहिए ।

पुत्रकारक पुत्रेश लग्नेशाः केन्द्रकोणगाः ।

पुत्रसौख्यमवाप्नोति जातस्तत्र न संशयः ॥ २० ॥

भावार्थ – यदि पुत्रकारक, पंचमेश एवं लग्नेश ये सब केन्द्र एवं त्रिकोण स्थानों में हों तो इस योग उत्पन्न व्यक्ति पुत्र सुख प्राप्त करता है ।

भावार्थ रत्नाकर

आप नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके इस पुस्तक के आनलाईन संस्करण को भी पढ सकते है ।

1. मेष लग्न | वृश्चिक लग्न
2. वृषभ लग्न | तुला लग्न
3. मिथुन लग्न | कन्या लग्न
4. कर्क लग्न | सिंह लग्न
5. धनु लग्न | मीन लग्न
6. मकर लग्न | कुंभ लग्न
7. अध्याय 2 | धन योग | विद्या | खान-पान
8. अध्याय 3 भ्रातृ-भाव |अध्याय 4 वाहन तथा भाग्य | अध्याय 5 शत्रु और रोग
9. अध्याय 6 स्त्री और काम | अध्याय 7 आयु और स्वास्थ्य
10. अध्याय 8 भाग्य योग | अध्याय 9 राज योग
11. अध्याय 10 तीर्थ स्नान | अध्याय 11 मृत्यु योग
12. अध्याय 12 दशा के परिणाम

13. **अध्याय 13 साधारण योग | अध्याय 14 ग्रहमालिका योग | अध्याय 15 ग्रहों का आधिपत्य आदि**
14. **नियम अध्याय**

शत्रु और रोग

अष्टमाधिपतौ लग्ने रोगदेहो भवेन्नरः ।

षष्ठेशे लग्नगे वाऽपि ज्ञाति रोगैश्च बाध्यते ॥ १ ॥

भावार्थ - यदि आठवें भाव का स्वामी लग्न में हो, तो जातक देह से रोगी होता है । उसी प्रकार छठे भाव का स्वामी यदि लग्न में हो तो मातृ पक्ष के मामा आदि द्वारा तथा रोगों से जातक पीड़ित होता है ।

व्याख्या – छठा और आठवाँ स्थान रोग का है, इसलिए लग्न के साथ इनका सम्बन्ध रोग को लग्न (Self) में लावेगा ।

छठा स्थान चतुर्थ से तृतीय होने के कारण माता के छोटे भाइयों का भाव है । इस भाव का स्वामी जब अपने भाव (छठे) से अष्टम होकर लग्न में स्थित होगा, तो छठे भाव को पीड़ित करेगा और सिद्धांत यह है कि पीड़ित ग्रह प्रदर्शित संबन्धी से लाभ नहीं होता, इसलिये मामा के सम्बन्ध में भी अशुभ फल कहा ।

लग्नषष्ठाधिपाभ्यान्तु सूर्यचन्द्रमसौ युतौ ।

भानुना ज्वरगण्डस्याच्चन्द्र ेण जलगण्डकम् ॥ २ ॥

भावार्थ - यदि लग्न और छठे भाव का स्वाभी सूर्य से भुक्त हो तो ज्वर आदि गर्मी से उत्पन्न होने वाले रोग होते हैं। इसी प्रकार यदि लग्नेश और षष्ठेश की युति चन्द्र से हो, तो जल सम्बन्धित कष्ट होता है ।

व्याख्या – लग्नेश का षष्ठेश से सम्बन्ध करना रोग का द्योतक होता है । परन्तु रोग किस प्रकार का है, इस बात का निर्णय वह ग्रह करता है जिसका प्रभाव लग्नेश–षष्ठेश दोनों पर ऐसी स्थिति में पड़ता है ।

कुजेन व्रणशस्त्रादि ग्रन्थि रोगभयं भवेत् ।

बुधेन संगतौस्यातां पित्तरोगी भवेन्नरः ॥ ३ ॥

भावार्थ - यदि उक्त इकट्ठे हुए षष्ठेश और लग्नेश पर मंगल का युति द्वारा प्रभाव हो, तो जातक को घाव, शस्त्र तथा ग्रन्थि आदि अन्य पट्टों (Muscle) के रोग होते हैं, क्योंकि इन सब का सम्बन्ध मंगल से है । यदि लग्नेश षष्ठेश से युति करने वाला ग्रह बुध हो, तो पित्त से उत्पन्न रोगों से पीड़ित होता है ।

व्याख्या – मंगल, चूँकि अग्नि, शस्त्र और घाव का कारक है, उसका प्रभाव लग्नेश और षष्ठेश पर पड़ने से इन कारणों से कष्ट का होना

युक्तियुक्त ही है । परन्तु बुध का प्रभाव केवल पित्त द्वारा कष्ट दे, यह बात विचारणीय है । बुध तो वात, पित्त और कफ तीनों दोषों का प्रतिनिधि है । उसे तो तीनों दोषों द्वारा पीड़ा देनी चाहिए । परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि बुध लग्नेश और षष्ठेश के अनुरूप कार्य करता हुआ उनके साझे दोष का फल करता है ।

लग्न पित्त द्योतक है और षष्ठ पृथ्वी तत्व का द्योतक है, अतः वायु दोष का तो प्रश्न नहीं उठता और अग्नि और पृथ्वी तत्व से जलीय (कफ) रोग की उत्पत्ति की संभावना भो नहीं, इसलिए पित्त से कष्ट कहा ।

देवेन्द्रपूज्य संयोगे रोगाभाव उदीरितः ।

शनिना यदि योगोऽयं चोराचाण्डालजं भयं ॥ ४ ॥

भावार्थ - यदि उक्त इकट्ठे हुए लग्नेश और पष्ठेश के साथ गुरु हो, तो रोग का अभाव कहना चाहिए और यदि उनसे शनि योग करता हो, तो जातक को चाण्डालों और चोरों से भय कहा है ।

व्याख्या – ऐसा प्रतीत होता है कि छठा भाव यद्यपि रोग नाम से प्रसिद्ध है यह भाव वस्तुतः स्वास्थ्य का भाव है, तभी तो गुरु के इसके साथ मिलाने पर रोग की वृद्धि न होकर स्वास्थ्य की वृद्धि हुई ।।

और बातों के अतिरिक्त छठा भाव चोरी और चोरों का भी भाव है, इसलिए जव लोभी शनि और निकृष्ट शनि से मिलकर पष्ठेश लग्नेश पर प्रभाव डालेगा तो लग्न अर्थात् जातक को चोरों तथा अन्य निम्न श्रेणी के लोगों से कष्ट होगा ही ।

राहुणा केतुना वापि संयोगो यदि विद्यते ।

जातस्य सर्पव्याघ्रादि भयं चाहुर्मनीषिणः ॥ ५ ॥

भावार्थ - यदि इकट्ठे हुए लग्नेश षष्ठेश के साथ राहु अथवा केतु हों तो साँप और चीते आदि से जातक को भय कहा है।

शुक्रेण सहसंयोगे कलत्रविपदं भवेत् ।

विक्रमेश युते भौमे युद्धाग्निधनमुच्यते ॥ ६ ॥

भावार्थ - यदि लग्न और छठे भाव का स्वामी शुक्र के साथ हो तो स्त्री से कष्ट होता है । यदि लग्नेश तथा छठे भाव का स्वामी तृतीयेश और मंगल से युक्त हो, तो जातक की मृत्यु युद्ध में होती है ।

लग्नेश्वरे हीनबले सुखस्थे नीचेर्कयुक्ते यदि वा ।

सपाये जलग्रहेणापि युते सुखेशे बलेन होने जलराशिः मग्नः रोगाधिपे व्ययस्थे तु नीचादिग्रहसंयुते ।

लग्नेशे बलसंयुक्ते रोगनाशं वदेत्बुधः ॥ ७ ॥

भावार्थ - यदि छठे भाव का स्वामी द्वादश भाव में स्थित हो और नीचादि ग्रह से युक्त हो और उधर लग्न का स्वामी बलवान् हो, तो रोग का नाश कहा है ।

व्याख्या - यदि छठे स्थान को रोग का प्रतिनिधि समझ लिया जावे, तो उसका एक बुरे (वारहवें) स्थान में जाकर नीच और पापी ग्रहों के साथ स्थित होना स्पष्टतया रोग के नाश का कारण होगा ।

परन्तु हमारा निवेदन यह है कि ऐसी स्थिति में रोग की अधिक उत्पत्ति होगी, क्योंकि छठा स्थान जैसा कि हम श्लोक सं० ४ की व्याख्या में कह चुके हैं, स्वास्थ्य का है न कि रोग का प्रतिनिधित्व करता है ।

बलहीने लग्नाथाच्छत्रुस्थानाधिपे यदि ।

शुभग्रहैश्च संबन्धे शत्रुमंत्रं समा दिशेत् ॥ ८ ॥

भावार्थ - यदि छठे भाव का स्वामी लग्नेश से निर्बल होता हुआ शुभ ग्रहों से युति अथवा दृष्टि द्वारा सम्बन्ध स्थापित करना हो, तो शत्रुओं से मेल-मिलाप हो जाता है ।

व्याख्या - शुभ ग्रहों का छठे भाव पर अथवा छठे भाव के स्वामी पर प्रभाव का होना शत्रुओं से मैत्री का सूचक है। यह मैत्री उस अवस्था में और भी आसान हो जावेगी जबकि शत्रु निर्बल हो और लग्नेश अर्थात् जानक वलवान् हो ।

स्त्री और काम

कलत्राधिपतिर्यस्तु कारकेण युतो यदि ।

क्रूरसंबन्ध रहितः कलत्रं चैकमेव हि ॥ १ ॥

भावार्थ – सप्तम भाव का स्वामी क्लत्र कारक शुक्र के साथ यदि (पुरुष की जन्म कुण्डली में) हो और उस पर क्रूर ग्रहों का किसी प्रकार से प्रभाव न हो, तो जातक की एक ही स्त्री (दीर्घजीवी) होती है ।

व्याख्या – ग्रन्थकार का आशय यह है कि जातक की स्त्री दीर्घजीवी होगी । सप्तमेश और शुक्र का बली होने का ही यह शुभ परिणाम होगा ।

पापाग्रहस्य संबन्धः कलत्राधिपते यदि ।

कुटुंबे सप्तमे वापि स्थिताः पापग्रहा यदि ॥ २ ॥

लाभं गतो वा शुक्रश्च शुक्रो नीचं गतोऽपि वा ।

सप्तमाधिपतिष्षष्ठे व्यये वा संस्थितो यदि ॥ ३ ॥

कलत्रान्तरयोगोयं विद्वद्भिः परिकीर्तितः ।

लग्ने पापग्रहयुते कलत्रान्तरभाक् भवेत् ॥ ४ ॥

भावार्थ – यदि पापी ग्रह सप्तम भाव के स्वामी के साथ युति अथवा दृष्टि सम्बन्ध रखता हो अथवा द्वितीय तथा सप्तम भावों में पाप ग्रह स्थित हों, अथवा शुक्र एकादश स्थान में स्थित हो अथवा शुक्र अपनी नीच राशि में स्थित हो अथवा सप्तमेश छठे या बारहवें स्थान में हो अथवा लग्न में पापी ग्रह स्थित हो, तो प्रथम स्त्री की मृत्यु होकर द्वितीय स्त्री की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – प्रथम स्त्री की आयु से सम्बन्धित भाव सप्तम और द्वितीय है । द्वितीय इसलिए भी कि यह भाव सप्तम से अष्टम होने के कारण स्त्री का आयु स्थान है ।

इसी प्रकार शुक्र स्त्री का कारक ग्रह होता हुआ स्त्री की आयु से सम्बन्धित है, अतः यह बात स्पष्ट है कि सप्तम सप्तमेश, द्वितीय द्वितीयेश अथवा शुक्र जब निर्बल और पीड़ित होंगे, तो प्रथम स्त्री की आयु को हानि पहुँचेगी ।

लग्न में पाप ग्रह की स्थिति से भी, चूंकि सप्तम स्थान को हानि पहुँचती है यह योग भी स्त्री की हानि में कारण है ।

कुटुंबदाररन्ध्रेषु चतुर्थे व्ययभेऽपि वा ।

सितः कुजश्च शुक्रश्च बलहीनो द्विदारदः ॥ ५ ॥

भावार्थ – यदि शनि और मंगल शुक्र के साथ द्वितीय, सप्तम, अष्टम, चतुर्थ अथवा द्वादश भाव में स्थित हों और शुक्र बलहीन हो, तो जातक को पहली स्त्री की मृत्यु के कारण दूसरा विवाह करना पड़ता है ।

व्याख्या – उक्त योग के द्वारा स्त्री की आयु को हानि पहुँचती है जिससे प्रथम स्त्री की मृत्यु हो जाती है। मंगल की उक्त स्थिति 'मांगलिक दोष' अथवा 'कुज दोष' खड़ा करती है ।

मंगल द्वितीय में होगा, तो सप्तम से अष्टम अर्थात् स्त्री की आयु को हानि पहुँचेगी। यदि चतुर्थ में होगा, तो अपनी चतुर्थ दृष्टि से स्त्री के दूसरे आयु भाव अर्थात् सप्तम भाव को हानि पहुँचेगी। यदि सप्तम में

हुआ, तो भी सप्तम पीड़ित होगा । अष्टम में हुआ, तो इसकी सप्तम दृष्टि द्वारा स्त्री का आयु भाव (द्वितीय) हानि उठावेगा और यदि द्वादश में हुआ, तो मंगल की अष्टम दृष्टि द्वारा स्त्री के आयु भाव सप्तय को हानि पहुँचेगी।

इस प्रकार श्लोक में कहा योग सप्तम भाव अथवा उससे अष्टम भाव और शुक्र (स्त्री कारक) को हानि पहुँचाकर प्रथम स्त्री की मृत्यु ले आवेगा ।

कुटुंबसप्ताष्टम वाहन व्ययेष्ववस्थितो भूमिसुतस्तथैव ।

देवेन्द्रपूज्यस्तु गुरुः कुटुंबे चिरात्कलत्रांन्तरमादिशान्ति ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि मंगल द्वितीय, सप्तम, अष्टम, चतुर्थ अथवा द्वादश भाव में हो और गुरु द्वितीय में, तो स्त्री की मृत्यु तो होगी परंतु कुछ देर से ।

व्याख्या – मंगल की उपरोक्त भावों में स्थिति स्त्री के जीवन को हानि पहुँचाती है परन्तु गुरु की द्वितीय स्थान में स्थिति से चूँकि द्वितीय स्थान कुछ बलवान् हो जाता है और द्वितीय स्थान स्त्री का आयु स्थान है, इसलिए स्त्री की मृत्यु कुछ वर्ष रुक जाती है।

शनिः कुटुंबे राहुश्चेत्सप्तमे यदि विद्यते ।

द्विकलत्रकयोगोयमित्याहुर्जातकोविदाः ॥ ७ ॥

भावार्थ – यदि राहु सप्तम स्थान में हो और शनि द्वितीय स्थान में तो जातक की दो शादियाँ होती हैं।

व्याख्या – द्वितीय और सप्तम दोनों भावों का जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, स्त्री की आयु से सम्बन्ध है, अतः इन दो भावों में दो क्रूर ग्रहों का बैठना स्त्री की आयु को हानि पहुँचावेगा ।

यदि राहु तथा शनि शत्रु राशि में स्थित हों, तो यह योग शीघ्र ही प्रथम स्त्री की मृत्यु के देने वाला बन जावेगा और यदि इन भावों पर अन्य पाप ग्रहों का भी प्रभाव हो तो स्त्री की आयु और भी थोड़ी होगी ।

द्वितीयासप्तमेशी शुक्रौ वा युगसप्तमे ।

पश्यन्तश्शुभसंयुक्ता यावत्संख्याग्रहैर्युताः ॥ ८ ॥

तावज्जीव कलत्राणि क्रूरयुक्तास्तुते यदि ।

कलत्रं भगमाप्नोति चैकभार्या विशिष्यते ॥ ९ ॥

भावार्थ – यदि दूसरे और सातवें भाव के स्वामी और शुक्र द्वितीय अथवा सप्तम भाव में स्थित हों, तो उनको जितने शुभ ग्रह अपने युति अथवा दृष्टि द्वारा प्रभावित करें उतनी ही स्त्रियाँ जातक की होंगी और यदि उक्त तीन ग्रह पापी ग्रहों से युक्त हों, तो स्त्रियों की मृत्यु होती है और केवल एक स्त्री बचती है ।

व्याख्या – द्वितीयेश, सप्तमेश और शुक्र प्रथम स्त्री के प्रतिनिधि हैं। इन पर यदि केवल मात्र शुभ प्रभाव हो, तो स्त्री के मरने का कोई प्रश्न नहीं उठता। परन्तु यह ग्रह उक्त स्थिति पर हो और शुभ और पापी

दोनों प्रभावों में हो, तो स्त्री मरती है । पुनः प्राप्त होती है, मरती है, प्राप्त होती है । इस प्रकार अन्त में एक ही स्त्री रह जाती है।

सप्तमस्थो यदि भृगुस्सौरिणा संयुतो यदि ।

स्वस्त्रीसक्तक इति प्रोक्तो जातो ज्योतिषकोत्तमः । १०।।

भावार्थ - यदि शनि और शुक्र सप्तम स्थान में स्थित हों, तो जातक की अपनी ही स्त्री में आसक्ति रहती है ।

व्याख्या - इसमें सन्देह नहीं कि शनि शुक्र का मित्र है और जब शनि और शुक्र दोनों सप्तम स्थान में अपने किसी मित्रादि (जैसे वृषभ, मिथुन, कन्या, तुला, मकर, कुंभ) की राशि में स्थित होंगे, तो स्त्री के दीर्घ आयु के द्योतक होंगे और ऐसी स्थिति में उनमें परस्पर प्रेम की भी संभावना है।

परन्तु हम समझते हैं कि यदि शनि और शुक्र किसी शत्रु राशि (मेष, कर्क, सिंह, वृश्चिक, धनु, मीन) में हुए तो फिर न केवल पति-पत्नी में प्यार का अभाव होगा बल्कि वे एक-दूसरे से पृथक् हो जावेंगे; विशेषतया जब सप्तम भाव पर सूर्य अथवा राहु का प्रभाव भी होगा। कारण कि शनि, सूर्य और राहु पृथकता-जनक ग्रह हैं ।

सप्तमस्थो यदि बुधः परस्त्रीसक्त उच्यते ।

सप्तमस्थो यदि गुरुः भार्या पतिपरायणा ॥। ११ ॥

भावार्थ – यदि बुध सप्तम भाव में हो, तो पुरुष अन्य स्त्री में आसक्त होता है और यदि कुण्डली में गुरु सप्तम भाव में हो, तो उसकी स्त्री पति के अनुकूल चलने वाली होती है ।

व्याख्या – बुध राजसिक ग्रह है और गुरु सात्विक, इसीलिए फल में तारतम्य है। बुध युवा भी है और उचित–अनुचित प्रभाव को ग्रहण भी जल्दी करता है, इसलिए भी यह अन्य स्त्री आसक्त करने की संभावना रखता है ।

सप्तमेश कुटुंबेश कर्मे शास्तु चतुर्थगाः ।

परस्त्रीषु रतो जातः इत्यूचुर्गणिका बुधा ॥ १२ ॥

भावार्थ – यदि द्वितीय सप्तम और दशम भाव के स्वामी चतुर्थ भाव में हों, तो जातक परस्त्री गामी होता है ।

सप्तमस्थः सैंहिकेयः जातेन निपुणो भवेत् ।

सप्तमस्थो यदि ध्वजः भार्या धूर्तेति कथ्यते ॥ १३ ॥

भावार्थ – यदि सप्तम भाव में राहु हो, तो मनुष्य कार्यों में निपुण होगा और यदि इस स्थान केतु हो, तो उस जातक की भार्या धूर्ता (चालाक और ठग) होगी।

व्याख्या - जब राहु सप्तम में होगा, तो निश्चित है कि केतु लग्न में होकर लग्न को प्रभावित करेगा। चूँकि केतु मंगल की भाँति कार्य करता है, व्यक्ति के स्वभाव में मंगल के गुण आ जावेंगे । केतु की पंचम दृष्टि भी बुद्धि स्थान अर्थात् पंचम भाव पर पड़ेगी जिसके फलस्वरूप भी बुद्धि में तीव्रता आवेगी, क्योंकि मंगल का एक गुण तीव्र बुद्धि वाला और कार्य कुशल होना इसलिए जातक में यह गुण आ जावेंगे और यदि सप्तम में केतु हुआ, तो स्त्री को आवश्यकता से अधिक चालाक बना देगा ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

आयु और स्वास्थ्य

संपच्छरीरपुत्राणां कारकस्य गुरोर्यदि ।

लग्नाधिपतिना योगोह्यायुः प्रबलमादिशेत् ॥ १ ॥

भावार्थ – धन, पुत्र और शरीर के कारक गुरु का यदि लग्न के स्वामी युति दृष्टि आदि द्वारा सम्बन्ध हो, तो जातक दीर्घ आयु पाता है ।

व्याख्या – ग्रन्थकार ने अध्याय १२ के श्लोक संख्या १ में इस सिद्धांत का प्रतिपादन किया है कि यदि किसी भी भाव के स्वामी का उस भाव के कारक से संयोग हो, तो उक्त भाव की वृद्धि होती है ।

इसी सिद्धांत के अनुसार यहाँ यदि शरीर द्योतक लग्नेश की शरीर कारक गुरु से युति हुई, तो शरीर की वृद्धि अर्थात् लग्न प्रदर्शित आयु आदि की वृद्धि होगी ।

आयुष्करेण शनिनाह्यष्टमाधिपतेर्यदि ।

संबन्धो विद्यते यस्य दीर्घायुर्योग उच्यते ॥ २ ॥

भावार्थ – यदि आयु का कारक 'शनि' आठवें भाव के स्वामी द्वारा दृष्ट हो अथवा उससे युक्त हो, तो जातक दीर्घायु वाला होता है ।

व्याख्या – पूर्व श्लोक में उल्लिखित सिद्धांत यहाँ भी लागू होता है । चूंकि शनि और अष्टमेश दोनों आयु का प्रतिनिधित्व करते हैं। उनका एकत्र होना आयु को बढ़ाता है। इनका बलवान् होना तो आवश्यक है ही ।

अष्टमस्थे शनौ जातो दीर्घायुर्योगमाप्नुयात् ।

अष्टमेशे लग्नकेतु अल्पायुष्यं विनिदिशेत् ॥ ३ ॥

भावार्थ – यदि शनि आठवें भाव में हो, तो आयु दोर्घ होती है । यदि आठवें भाव का स्वामी लग्न में केतु के साथ हो, तो जातक की आयु थोड़ी होती है ।

व्याख्या – साधारण नियम यह है कि अष्टम स्थान में यदि कोई नैसर्गिक पापी स्थित हो, तो आयु घट जाती है । परन्तु शनि इस नियम का अपवाद है ।

परन्तु शनि के सम्बन्ध में भी हमारा विचार है कि शनि भी अष्टम भाव में यदि अपनी राशि, अपनी उच्च राशि अथवा अपनी मित्र राशि में स्थित हो, तभी दीर्घायु देता है। यदि शत्रु राशि में शनि अष्टम में हो, तो आयु को कम ही करता है ।

यदि अष्टमेश लग्न में हो, तो इतने मात्र से कोई परिणाम नहीं निकालना चाहिए। इस योग का तात्पर्य केवल इतना है कि आयु द्योतक दो तथ्य अर्थात् अष्टमेश और लग्न एक स्थान पर हैं। आगे इन पर शुभ प्रभाव से दीर्घायु और पाप प्रभाव से अल्पायु का निर्णय होगा । इसी नियम के अनुसार यदि केतु अष्टमेश तथा लग्न पर अपनी युति द्वारा प्रभाव डालेगा, तो एक क्रूर ग्रह के नाते आयु को कम करेगा। इसके विपरीत, यदि गुरु अष्टमेश के साथ लग्न में हो, तो वह आयु को बढ़ावेगा ।

पितृकारक भानोस्तु भाग्याधिपतिना यदि ।

संबन्धो विद्यते यस्य दीर्घायुः पितुरुच्यते ॥ ४॥

भावार्थ – यदि नवम भाव का स्वामी पिता के कारक सूर्य से युति दृष्टि आदि द्वारा संबन्ध स्थापित किए हुए हो, तो जातक का पिता दीर्घजीवी होता है ।

भाग्यस्थो यदि भानुस्यादल्पायुष्यं पितुस्तथा । चतुर्थे यदि चन्द्रस्तु मातुस्यादल्पजीवितम् ॥ ५ ॥

भावार्थ – सूर्य नवम में हो, तो पिता की आयु थोड़ी होती है और चन्द्रमा चतुर्थ भाव में हो, तो माता की आयु थोड़ी होती है ।

व्याख्या – यहाँ ग्रन्थकार ने 'कारको भावनाशाय' के सिद्धांत को लागू किया है अर्थात् यदि किसी भाव का कारक उसी भाव में स्थित हो, तो कारकत्व गुण का नाश होता है। परन्तु हम समझते हैं कि इसमें आधी

सच्चाई है। साथ ही यह शर्त भी होनी चाहिये कि उन दोनों पर पाप प्रभाव भी हो, क्योंकि शुभ प्रभाव के होने पर शुभ फल देखा गया है।

भाग्यस्थो भानुभाग्येशी आयुर्हीनो भवेत्पिता ।

लाभस्यो यदि भाग्येशौ दीर्घायुर्योगवान् पिता ॥ ६॥

भावार्थ - यदि नवम भाव का स्वामी और सूर्य दोनों नवम भाव में हों, तो पिता की आयु थोड़ी होती है और यदि नवम भाव का स्वामी एकादश भाव में हो, तो पिता की आयु लम्बी होती है।

चतुर्थस्थानपतिना संबन्धों यदि विद्यते ।

मातृकारक चन्द्रस्य मात्रायुष्यं विनिदिशेत् ॥ ७ ॥

भावार्थ - यदि चतुर्थ भाव के स्वामी का मातृ कारक चन्द्र से सम्बन्ध हो, तो माता की दीर्घ आयु कहनी चाहिए ।

व्याख्या - ग्रन्थकार चतुर्थ भाव में चन्द्र की स्थिति का माता की आयु के लिये अच्छा नहीं मानता परन्तु चतुर्थ भाव के स्वामी के साथ चन्द्र की स्थिति का इस सन्दर्भ में शुभ मानता है । यहाँ भी हम समझते हैं कि फल का निर्णय शुभ अथवा अशुभ प्रभाव से ही करना चाहिये ।

तृतीये यदि भौमस्तु भ्रातृस्यादल्पजीवितम् ।

तृतीयस्थो यदिगुरुर्भ्रात्रारिष्टं वदंति हि ॥ ८ ॥

भावार्थ – तृतीय भाव में मंगल हो, तो भाई को आयु थोड़ी होती है। और तृतीय में यदि गुरु हो, तो भाई को कष्ट कहना चाहिये ।

व्याख्या – भाई के सम्बन्ध में ग्रन्थकार ने पहले तो "कारको भावनाशाय" का सिद्धांत लागू किया है। जिसके सम्बन्ध में पाँचवें श्लोक पर व्याख्या देखिये ।

गुरु की तृतीय भाव में स्थिति के कारण जब तक गुरु निर्बल न हो, बड़ा भाई देगा और उसकी आयु को दीर्घ करेगा, क्योंकि गुरु की शुभ दृष्टि एकादश भाव पर पड़ेगी ।

तृतीयस्थो यदि गुरु स्वक्षेत्रेस्यात्तृतीयकम् ।

एक एव च भ्रातास्यज्जातकस्य वदंति हि ॥ ९ ॥

भावार्थ – यदि तृतीयेश तृतीय भाव में गुरु के साथ हो, तो जातक का एक ही भाई होगा ।

व्याख्या – एक शुभ ग्रह होने के नाते उसके तृतीय भाव और उसके स्वामी पर प्रभाव डालने के कारण छोटे भाइयों के होने की संभावना है और गुरु की एकादश भाव पर दृष्टि के कारण बड़े भाई के होने की भी संभावना है, परन्तु ग्रन्थकार का भाव "स्थान हानि करो जीव " की लोकोक्ति को लागू करता है।

आयुर्होनं च पुत्रस्य गुरुः पञ्चमगो यदि ।

अल्पायुष्यं कलत्रस्य भृगुस्सप्तमगो यदि ॥ १० ॥

भावार्थ – पंचम भाव में गुरु पुत्र की आयु को और सप्तम में शुक्र स्त्री की आयु को कम करता है ।

व्याख्या – यहाँ भी "कारको भावनाशाय" को अपनाया गया है ।

चतुर्थेशश्चन्द्रमाश्च भाग्ये राज्येऽथ लाभगे ।

पञ्चमेहिस्थितौस्यातां मातुः दीर्घायुषं वदेत् ॥ ११ ॥

भावार्थ – यदि चतुर्थेश और चन्द्र नवम, दशम अथवा षष्ठम भाव में इकट्ठे हों, तो माता दीर्घ आयु वाली होती है ।

व्याख्या – "भावेश कारक के साथ हो परन्तु उस भाव में न हो जिसका कि वह कारक है, तो अच्छा फल देती है।" इस सिद्धांतानुसार यह श्लोक है। साथ ही भावेश और कारक का बलवान् होना आवश्यक है ।

चतुर्थेशः चतुर्थस्थः मूलकोणं भर्वोद्दम् ।

दीर्घमायुरसमाप्नोति मातेत्यूचुबुधोत्तमाः ॥ १२ ॥

भावार्थ – यदि चतुर्थ स्थान का स्वामी चतुर्थ भाव में अपनी मूल त्रिकोण राशि में स्थित हो, तो जातक की माता दीर्घजीवी होगी ।

चतुर्थेशश्च चन्द्रश्च प्रबलस्थान संस्थितौ ।

क्षोण चन्द्रो यदि भवेच्चतुर्थशर्शानवीक्षितं ।

अल्पायुष्यं समाप्नोति जातस्य जननी ध्रुवम् ॥ १३ ॥

भावार्थ – यदि चतुर्थेश और चन्द्र केन्द्र आदि स्थिति में भी हों परंतु यदि चन्द्रमा क्षीण हो (सूर्य से ७२ अंश के अन्दर अन्दर हो) और चतुर्थ भाव पर शनि की दृष्टि हो, तो जातक की माता की आयु थोड़ी होती है।

व्याख्या – इस श्लोक से पता चलता है कि किसी भावेश का अपने कारक के साथ बैठना ही पर्याप्त नही । कारक आदि का बलवान् होना भी अपेक्षित है ।

भावार्थ रत्नाकर

आप नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके इस पुस्तक के आनलाईन संस्करण को भी पढ सकते है ।

1. मेष लग्न | वृश्चिक लग्न
2. वृषभ लग्न | तुला लग्न
3. मिथुन लग्न | कन्या लग्न
4. कर्क लग्न | सिंह लग्न
5. धनु लग्न | मीन लग्न
6. मकर लग्न | कुंभ लग्न
7. अध्याय 2 | धन योग | विद्या | खान-पान
8. अध्याय 3 भ्रातृ-भाव |अध्याय 4 वाहन तथा भाग्य | अध्याय 5 शत्रु और रोग
9. अध्याय 6 स्त्री और काम | अध्याय 7 आयु और स्वास्थ्य
10. अध्याय 8 भाग्य योग | अध्याय 9 राज योग
11. अध्याय 10 तीर्थ स्नान | अध्याय 11 मृत्यु योग
12. अध्याय 12 दशा के परिणाम

13. **अध्याय 13 साधारण योग | अध्याय 14 ग्रहमालिका योग | अध्याय 15 ग्रहों का आधिपत्य आदि**
14. **नियम अध्याय**

भाग्य योग

भाग्माधिपो लाभगे वा लाभेशो भाग्यगो यदि ।

लाभ भाग्याधिपत्योश्च संबन्धे भाग्यमादिशेत् ॥ १ ॥

भावार्थ - यदि नवम भाव का स्वामी एकादश भाव में हो अथवा एकादश भाव का स्वामी नवम में हो अथवा उनमें युति दृष्टि आदि से परस्पर संम्बन्ध हो, तो जातक भाग्यशाली होता है ।

व्याख्या - एकादश भाव न केवल धन और यश का भाव है बल्कि यह वस्तुओं आदि की प्राप्ति की शक्ति का भी द्योतक है । समस्त वस्तुएँ जिनका एकादश भाव से सम्बन्ध हो वह प्राप्त हो जाती है। इसी सिद्धांत को यहाँ अपनाया गया है।

द्वन्द्वी भूय ग्रहश्चाटौ वेदसंख्यासु राशिषु ।

स्थितश्चेद्वहु भाग्यस्तु वक्तव्यो जातकस्य हि ॥ २ ॥

भावार्थ - यदि जन्म कुण्डली में सब ग्रह दो-दो होकर चार राशियों में स्थित हों, तो बहुत भाग्यप्रद योग बनता है ।

व्याख्या - ग्रन्थकार ने यह नहीं बतलाया कि ग्रह किन चार राशियों में स्थित होने चाहियें, अतः यह शुभ योग क्यों और कैसे बनता है इस विषय पर कुछ नहीं कहा जा सकता ।

द्वन्द्वीभूयग्रहाषष्टा गुणसंख्यासु राशिषु ।

स्थिताश्चेद्भाग्ययोगस्तु वक्तव्यो जातकस्य हि ॥ ३ ॥

भावार्थ - यदि ६ ग्रह तीन राशियों में दो-दो होकर स्थित हों तो जातक भाग्यशाली होता है ।

चतुर्णां शुभ खेटानां पापखेटक वीक्षणम् ।

नास्ति चेद्भाग्य बाहुल्यं धनयोगं समश्नुते ॥ ४।

भावार्थ - यदि चार नैसर्गिक शुभ ग्रहों में से किसी पर भी पाप ग्रहों की दृष्टि न हो, तो जातक बहुत धनी और भाग्यशाली होता है ।

व्याख्या - यदि चन्द्रमा सूर्य से दूर हो, यदि बुध का योग शुभ ग्रह से हो, इसी प्रकार यदि शुक्र और गुरु बलवान् हों तो वे सब किसी न किसी रूप धन के द्योतक होंगे, अतः उन पर पापी ग्रहों के प्रभाव का न होना और भी धनप्रद होगा ।

तृतीय षष्ठ लाभेषु स्थिताश्चेत् क्रूर खेचराः ।

जातस्य योगो भाग्यस्य वक्तव्यस्सूरिभिस्तथा ॥ ५ ॥

भावार्थ – यदि नैसर्गिक पापी ग्रह कुण्डली में तृतीय, षष्ठ और एकादश भाव में स्थित हों, तो यह धनदायक शुभ योग समझना चाहिये ।

व्याख्या – इस श्लोक का आशय यह है कि नैसर्गिक पाप ग्रह शुभ भावों के स्वामी होकर यदि तृतीय आदि उक्त भावो में हों, तो वे उन भावों की वृद्धि करेंगे जिनके वे स्वामी होंगे और इसीलिए शुभ फलप्रद होंगे।

यद्भावकारको लग्नाद्व्यये तिष्ठति चेद्यदि ।

तस्य भावस्य सर्वस्य भाग्ययोग उदीरितः ॥ ६ ॥

भावार्थ – जातक को इस भाव –विषयक बातों से लाभ होगा जिस भाव का कारक लग्न से द्वादश भाव में स्थित हो ।

व्याख्या – उदाहरणार्थ, सूर्य को लें ! सूर्य यदि द्वादश भाव में हो, तो ग्रन्थकारानुसार नवम भाव सम्बन्धी पिता की वृद्धि होगी, क्योंकि नवम का कारक सूर्य द्वादश में है । सूर्य की यह स्थिति नवम से चतुर्थ केन्द्र में होगी ।

यदि चन्द्रमा जोकि माता का कारक है यदि द्वादश भाव में हुआ तो मातृ स्थान से नवम होगा, इसलिये माता के लिये शुभकारक होगा ।

मंगल जोकि भ्रातृ कारक है यदि द्वादश भाव में स्थित हुआ, तो तृतीय भाव जिसका कि वह कारक है से दशम केन्द्र में होकर बलवान् होगा।

गुरु जो पुत्र कारक है द्वादश भाव हुआ, तो पंचम जिसका कि वह कारक है से अष्टम होगा । यह स्थिति यद्यपि पंचम के लिए अशुभ है, तो भी पंचम से आयु स्थान के लिए कुछ शुभ सिद्ध हो सकती है।

शुक्र जोकि स्त्री कारक है यदि द्वादश में होगा, तो सप्तम से छठे होगा। शुक्र की यह स्थिति ग्रन्थकारों ने शुभ मानी ही है आदि-आदि ।

प्रायः सब स्थितियों में उस भाव को जिसका कि ग्रह कारक है। उक्त द्वादश स्थिति से लाभ पहुँचता है ।

वाहनेशश्च शुक्रश्च सप्तमेश्वर भाग्यौ ।

लाभभाग्यगतास्तेस्तु शनि संबन्धिनो यदि ॥ ७ ॥

तद्दशान्तंदेशाकाले गजवाहन गजवाहन लाभकृत् ।

बृहज्जातक योगोयं सूरिभिः परिकीर्तितः ॥ ८ ॥

भावार्थ - जातक को शनि की दशा भुक्ति में हाथियों की प्राप्ति होती है यदि चतुर्थेश, शुक्र, सप्तमेश और नवमेश सब एकादश अथवा नवम भाव में हों और शनि से सम्बन्धित हों ।

व्याख्या – उक्त ग्रह योग में शनि हाथी का रूप धारण कर लेता है । शनि भारवाही तो है ही और निम्नतम ग्रह होने से पशु बन सकता है। धीरे भी चलता है । अब चूंकि चतुर्थेश वाहन होता है और इसी प्रकार सप्तमेश भी क्योंकि सप्तम चतुर्थ से चतुर्थ होता है। शुक्र तो वाहन कारक है ही।

अतः स्पष्ट है कि इन सब का एकादश भाव में योग उनकी प्राप्ति का योग होगा। उनकी भाग्य भवन में स्थिति भी उनकी प्राप्ति का सूचक होगी क्योंकि भाग्य भी तो अचानक प्राप्ति का नाम है।

लग्नभाग्य चतुर्थशाः राज्येशेन च राज्यगाः ।

अथवा लग्नदारस्थाः तेषां दायेथबांतरे ॥ ९ ॥

काले सिंहासनप्राप्ति लभते बहुभाग्यभाक् ।

महत्कीति समायुक्तो भवतीत्यनु शुभ मः ॥ १० ॥

भावार्थ - यदि लग्न, नवम और चतुर्थ भाव के स्वामी तीनों ग्रह दशम भाव में दशमेश के साथ स्थित हों अथवा उक्त तीनों लग्न में हों अथवा सप्तम भाव में हो तो इनमें से किसी की भी दशा भुक्ति में जातक को राज्य, भाग्य और यश की प्राप्ति होगी।

व्याख्या – यदि दशम और उसका स्वामी लग्नेश से सम्बन्धित होगा तो दशम प्रदर्शित राज्य की प्राप्ति युक्ति युक्त है। इसी प्रकार वे नवमेश से जब सम्बन्धित होंगे तो राज्य का भाग्य में होना सिद्ध होगा ।

श्लोक के द्वितीय भाग में उक्त ग्रहों के लग्न अथवा सप्तम में होने को शुभ कहा है। यदि लग्नेश लग्न में चतुर्थेश और नवमेश के साथ होगा तो दो केन्द्र स्वामी दो त्रिकोण स्वामियों से सम्बन्ध स्थापित करेंगे जोकि प्रबल राजयोग होगा। उनका सप्तम स्थान में होना भी शुभ होगा, क्योंकि तब लग्नेश की लग्न पर दृष्टि होगी और वह राजयोग कारक भी होगा ।

पञ्चमे भाग्यराशौ वा उच्चस्था खेचरा स्थिताः ।

जातो योगमवाप्नोति कीर्तिञ्चापि समश्नुते ।। ११ ।।

भावार्थ - यदि पंचम अथवा नवम भाव में कोई उच्च राशि में स्थित ग्रह हो, तो जातक धनी और विख्यात होगा ।

व्याख्या – जिस भाव में कोई ग्रह उच्च होता है, वह उस भाव के गुणों की उत्कृष्टता का द्योतक होता है । नवम भाव सबसे शुभ भाव है और नवम से नवम होने के कारण और त्रिकोण भवन होने के कारण पंचम भी शुभ है, अतः इन भावों की उत्कृष्टता भाग्य और धन आदि देगी ही।

सूर्य शुक्र बुधाः पुत्रे लाभस्यश्च भवेद्गुहः ।

बुधदाये विशेषेण धनभाग्यं समश्नुते ।। १२ ।।

भावार्थ - यदि सूर्य बुध और शुक्र पंचम भाव में हों और गुरु एकादश में, तो जातक को बुध की दशा में विशेष धन की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – उक्त स्थिति में सूर्य पर बुध, शुक्र और गुरु के तीन शुभ प्रभाव होंगे । अब चूंकि बुध ने उन ग्रहों का फल करना है जिनके कि प्रभाव में वह है, यहाँ वह मुख्यतया सूर्य का फल करेगा, क्योंकि सूर्य इनमें प्रमुख है, अतः सूर्य के शुभ प्रभाव में होने के कारण बुध भी सूर्य का शुभ फल करेगा और सूर्य से सम्बन्धित, यश, राज्य आदि देगा ।

पितृकारक भानोश्च भाग्यभावेश्वरोपि वा ।

उभौ तौ व्ययगौस्यातां पितृभाग्यमुदीरितम् ॥ १३ ॥

भावार्थ – यदि पितृकारक सूर्य और नवम भाव का स्वामी दोनों द्वादश भाव में हों, तो पिता भाग्यशाली हो ।

व्याख्या – सूर्य की द्वादश स्थिति पिता के लिए शुभ है, इस बात का उल्लेख छठे श्लोक में हो चुका है । यहाँ नवमेश (पिता) को भी सम्मिलित कर लिया गया है।

सूर्य मेषं गतेचैव पितृभाग्यमुदीरितम् ।

तुलायां यदि वा भानुः भाग्यहीनो भवेत्पिता ॥ १४ ॥

भावार्थ – सूर्य मेष में हो, तो पिता भाग्यशाली और तुला में हो, तो निर्धन होता है ।

व्याख्या – सूर्य पिता का कारक है, अतः उसकी स्थिति पिता की स्थिति की बहुत हद तक सूचक होगी । 'बहुत हद तक' इसलिए कि नवम भाव और नवमेश का बलवान् होना भी पिता के भाग्यशाली होने के लिए आवश्यक है ।

धनुर्लग्ने तु जातस्य पितृभाग्यमुदीरितम् ।

तुलायां संस्थितोपिस्याद्रविस्तत्रैव भाग्यदः ॥ १५॥

भावार्थ – धनु लग्न हो और सूर्य तुला में (नीच) भी हो, तो भी पिता से लाभ रहता है ।

व्याख्या – धनु लग्न वालों का सूर्य पिता स्थान का स्वामी भी होता है और कारक भी। ऐसे प्रतिनिधित्व पूर्ण ग्रह का प्रमुख उपचय भाव में स्थित होना सूर्य को बलवान् करेगा । यद्यपि वह नीच राशि में स्थित होगा। सूर्य इसलिए भी बलवान् होगा कि वह अपने नवम भाव से भी उपचय में होगा, अतः बलवान् सूर्य जातक के लिए शुभप्रद हो जावेगा ।

व्ययेश भाग्यराशीश सूर्याणां संस्थितिर्व्यये ।

पितृस्तु भाग्ययोगश्च व्यये देवेज्य रिफपौ ॥ १६ ॥

भावार्थ – यदि नवमेश, द्वादशेश और सूर्य बारहवें भाव में हों, तो पिता भाग्यशाली होता है। यदि द्वादशेश और गुरु द्वादश भाव में हों, तो भी यही फल होता है ।

व्याख्या – श्लोक का प्रथमार्द्ध का फल श्लोक संख्या ६ में कहे सिद्धान्तानुसार कहा गया है। और द्वादश भाव में द्वादशेश और गुरु सुख कारक के बैठने का अर्थ होगा कि पिता के स्थान अर्थात् नवम स्थान से सुख स्थान में सुख भाव का स्वामी और सुख कारक सभी इकट्ठे हैं, उनका इस प्रकार इकट्ठा होना पिता के सुख में वृद्धि करने वाला होगा ।

व्यये शुक्रस्य संस्थानं कलात्रात्भाग्यमुदेशेत् ।

व्यये चन्दस्य संस्थानं मातृभाग्यमुदीरितम् ।। १७ ।।

भावार्थ – शुक्र यदि द्वादश भाव में हो, तो पत्नी द्वारा भाग्य की प्राप्ति होती है । इसी प्रकार द्वादश स्थान में चन्द्र हो, तो माता द्वारा भाग्य की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – यह फल श्लोक सं ६ में वर्णित सिद्धान्तानुसार है।

कुजो व्यये स्थितो यस्य भ्रातृभाग्यमुदीरितम् ।

भाग्येशः कुवलं रिःके पितृभाग्यमुदीरितम् ॥ १८ ॥

भावार्थ – यदि मंगल द्वादश भाव में हो, तो भाइयों द्वारा भाग्य की प्राप्ति हो। इसी प्रकार नवमेश यदि द्वादश भाव में हो, तो पिता से भाग्य की प्राप्ति कहनी चाहिये ।

व्याख्या – भाग्येश शब्द का यहाँ "कुबलं" विशेषण है । कुबलं शब्द के प्रयोग का भाव स्पष्ट नहीं है । जैसा कि इसका अर्थ 'बुरे अथवा थोड़े बल वाला' है । यह अर्थ पिता स्थान को लाभ कैसे दे सकता है ? क्योंकि ग्रह का निर्बल होना शुभ फल नहीं देता। ऐसा प्रतीत होता है कि "कुवलं" के स्थान पर "सुवलं" होना चाहिए।

भाग्याधिपस्सप्तमस्थः भाग्ये सप्तमनायकः ।

कलत्र भाग्यमाप्नोति स्वार्जित धनमेव च ॥ १९ ॥

भावार्थ – यदि भाग्याधिपति सप्तम में और सप्तमेश नवम में हो, तो यह व्यत्यय (Exchange) स्त्री से धन प्राप्ति और स्वार्जित धन की प्राप्ति का योग है।

व्याख्या – इस योग द्वारा सप्तम और नवम का घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित हो जावेगा जिसके फलस्वरूप अपने भाग्य में स्त्री का हाथ होगा । इसी प्रकार चूंकि नवमेश लग्न को देखेगा, भाग्य का स्व अर्थात् निज से भी सम्बन्ध स्थापित हो जावेगा ।

द्वितीयेश बुधष्वष्ठे ज्ञातीनां धनमश्नुते ।

केवलं तु बुधष्षष्ठे ज्ञातीनां धनमश्नुते ॥ २० ॥

भावार्थ – यदि द्वितीयेश होकर बुध छठे भाव में हो अथवा वैसे ही वह छठे हो, तो जातक को मामाओं से धन की प्राप्ति होती है।

पञ्चमेशोपि वागीशो उच्चस्थानस्थितो यदि ।

भाग्यवन्तस्तस्य पुत्रा इति ज्योतिषकोविदुः ॥ २१ ॥

भावार्थ – यदि पंचमेश और गुरु दोनों उच्च राशि में स्थित हों, तो जातक के पुत्र बहुत भाग्यवान होते हैं ।

व्याख्या – पंचम भाव, पंचम भाव का स्वामी और पंचम भाव का कारक गुरु ये तीन "पुत्र" का प्रतिनिधित्व करते हैं । यदि पंचमेश और गुरु उच्च होंगे, तो तीन में से दो अंग तो बलवान् होंगे ही । अतः यह योग पुत्रों की उन्नति का सूचक बनेगा ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

राज योग

द्वितीय पञ्चमेश तु द्वितीये पञ्चमे यदि ।

भाग्यराज्यस्थितौवापि राजयोगप्रदी तो ॥ १ ॥

भावार्थ – यदि दूसरे और पांचवें भाव के स्वामी द्वितीय अथवा पंचम भाव में स्थित हों अथवा ये दोनों नवम अथवा दशम भाव में स्थित हों, तो जातक को राजयोग प्रदान करते हैं ।

धनलाभाषियों राज्ये दोषादि रहितो स्थितौ ।

तयोये तु संप्राप्ते राजयोगप्रदौ श्रुतौ ॥ २ ॥

भावार्थ – यदि द्वितीय और एकादश भाव के स्वामी दशम भाव में पाप ग्रह की युति अथवा दृष्टि के बिना स्थित हो तो अपनी दशा में जातक को राजयोग का फल देते हैं ।

राज्यलाभचतुर्थेषु पञ्चमे वा स्थितो यदि ।

राजयोगप्रद्रो राहुस्तद्दशान्तई शासु च ॥ ३॥

भावार्थ – यदि राहु दशम, एकादश, चतुर्थ अथवा पंचम भाव में स्थित हो तो अपनी दशा भुक्ति में राजयोग का फल करता है ।

व्याख्या - राहु एक छाया ग्रह है और अपने ऊपर पड़ने वाले प्रभाव के अनुसार ही फल करता है। चूंकि उक्त भाव सभी धन अथवा राज्य के द्योतक हैं, राहु इनमें बैठकर धनादि प्रदान करेगा। परंतु राहु पाप प्रभाव में नहीं होना चाहिये।

केतोस्ततीय संस्थानं योगदं भवति ध्रुवम् ।

भाग्यापत्यस्य केतुस्तु न शुभो दोषमावहेत ॥ ४ ॥

भावार्थ - केतु की तृतीय भाव में स्थिति धनादि योग देती है। नवम अथवा पंचम में केतु दोषी है शुभफल नहीं करता ।

व्याख्या - केतु का तृयीय भाव में स्थित होकर शुभ फल करना इस नियमानुसार है कि पापीग्रह उपचय (३, ६, १०, ११) भावों में स्थित होकर शुभ फल करते हैं । ग्रन्थकार का कहना उन अवस्थाओं के लिए है जहाँ केतु पर कोई प्रभाव नहीं, यदि कोई प्रभाव हुआ तो केतु उस प्रभाव के अनुसार ही फल करेगा।

तृतीये चन्द्रशुकौ तु स्थितीचेद्योगदो भृगुः ।

शुक्रदायेतु संप्राप्ते शुक्राद्योगं समश्नुते ॥ ५ ॥

भावार्थ - यदि चन्द्र और शुक्र तृतीय भाव में स्थित हों तो शुक्र अपनी दशा भुक्ति में बहुत शुभ फल देता है ।

व्याख्या - चन्द्र के साथ स्थित ग्रह चन्द्र का फल करेगा ही, और चन्द्र चूंकि एक लग्न और धनदायक ग्रह है उसका फल धनादि के विषय में शुभ ही होगा । परन्तु इतना ध्यान रहे, चन्द्रमा को पक्षबल आदि में बलवान् होना चाहिए।

राज्याधिपस्तृतीये च लाभे वा यदि संस्थितः ।

सर्वत्र योगो न भवेत्कुत्रचिच्च भविष्यति ॥ ६ ॥

भावार्थ - यदि दशम भाव का स्वामी तृतीय अथवा एकादश स्थान में स्थिति हो, तो इससे पक्के योग की प्राप्ति नहीं होती । कभी-कभी लाभ भी होता है ।

व्याख्या - यदि दशमेश नैसर्गिक पापी ग्रह हो, तो उपचय में स्थित वह शुभ फल भी कर सकता है । परन्तु चूंकि तृतीय स्थान दशम से छठे है, इसलिए दशम कुछ हद तक हानि भी उठावेगा ।

इसी प्रकार यदि दशमेश पराशरीय नियमों के अनुसार शुभ हुआ, तो उसका एकादश में बैठना शुभ फल देगा और यदि वह अशुभ हुआ, तो फल भी अशुभ होगा ।

राज्याधिपोषि च गुरुस्तृतीये यदि संस्थितः ।

भ्रातृशत्रु यथा योगः कथययोगप्रदो गुरुः ॥ ७ ॥

भावार्थ – यदि गुरु दशमेश होकर तृतीय स्थान में स्थित हो, तो भाई से शत्रुता परन्तु धन के विषय में शुभ फल देता है ।

व्याख्या – गुरु चूँकि तृतीय से अष्टमेश होकर तृतीय में स्थित होगा उसकी यह स्थिति भाई से शत्रुत्व उत्पन्न कर सकती है, विशेषतया जब लग्न मीन हो क्योंकि ऐसी स्थिति में गुरु तृतीय भाव शत्रु राशि में स्थिति होगा ।

परन्तु जहाँ तक धन का सम्बन्ध है धन कारक शुभ गुरु की व्यापार (सप्तम) भाग्य (नवम) और लाभ पर दृष्टि अच्छी धनदायक सिद्ध होगी ।

भाग्याधिपश्चाष्टमस्थस्तद्दाये नैवयोगदः ।

भाग्याषिपोपि च गुंरोह्यं ष्टमस्थोपि भाग्यदः ॥ ८ ॥

भावार्थ – यदि नवम भाव का स्वामी अष्टम में स्थित हो, तो धन नहीं देता परन्तु गुरु यदि नवमेश होकर अष्टम में स्थिति हो, तो धनदायक है ।

व्याख्या – गुरु यहाँ इसलिए शुभ होगा कि उसकी दृष्टि दो शुभ भावों अर्थात् धन भाव और सुख भाव जिनका कि गुरु कारक भी है, पर होगी ।

रंध्रभाग्याधिपत्योश्च संबन्धो यदि विद्यते ।

अष्टमाधिपतेद्दय संप्राप्ते योगमादिशेत् ॥ ९ ॥

भावार्थ – यदि नवम और अष्टम भाव के स्वामियों में युति दृष्टि आदि सम्बन्ध हो तब अष्टमेश की दशा में धनादि की प्राप्ति कहनी चाहिए।

व्याख्या – ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रन्थकार की सम्मति में कोई भी ग्रह उस ग्रह का फल करेगा जिससे कि वह युति द्वारा प्रभावित है । अतः यहाँ अष्टमेश नवमेश का शुभ फल करेगा ।

भाग्यरन्धाधिपत्योश्च संबन्धो यदि विद्यते ।

भाग्ये शदाये संप्राप्ते नैवयोगप्रदोह्यसौ ।

अष्टमाधिपतेरंतर्द्दशायां योगदो भवेत् ॥ १० ॥

भावार्थ – यदि अष्टमेश और नवमेश परस्पर युति आदि द्वारा सम्बन्धित हों, तो नवमेश की दशा शुभ फल की प्राप्ति नहीं होती । अष्टमेश की अन्तर्दशा में शुभ फल मिलता है ।

व्याख्या – यहाँ भी पिछले श्लोक से सम्बन्धित नियम को लागू किया गया है।

राज्यलाभाधिपत्योश्च संबन्धो यदि विद्यते ।

लाभाषिप दशाकाले राजयोगो भविष्यति ॥ ११ ॥

भावार्थ – यदि दशमेश और एकादशेश में परस्पर युति आदि से सम्बन्ध हो, तो एकादशेश की दशा में राज योग की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – यहाँ भी गत श्लोकों में लागू किए गये नियम का प्रयोग है । एकदशेश अपना फल न देकर दशम भाव (राज्य) का फल करेगा ।

राज्यलाभाषिपत्योश्च संबन्धो यदि विद्यते ।

राज्येशदाये संप्राप्ते समयोग उदीरितः ।। १२ ।।

भावार्थ – यदि दशमेश और एकादशेश में युति आदि सम्बन्ध हो, तो दशमेश की दशा में मध्यम रूप से धन की प्राप्ति होगी ।

लाभेशान्तर्द्द शाकाले योगहीनो भवेत् ध्रुवम् ।

दशमस्थ भृगोः पाके न योगं लभते नरः ।

सप्तमस्थः शनैः पाके राजयोगं समश्नुते ।। १३ ।।

भावार्थ – एकादश भाव के स्वामी की भुक्ति में जातक को बहुत शुभ फल की प्राप्ति न होगी । दशम भाव में स्थित शुक्र की दशा में विशेष शुभ फल नहीं होता । परन्तु सातवें भाव में स्थित शनि की दशा में बहुत धन की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – श्लोक की प्रथम पंक्ति का सम्बन्ध पिछले श्लोक से है । इस प्रकार दशम भाव के स्वामी की महादशा और एकादश भाव के

स्वामी की भुक्ति में (जबकि दोनों में सम्बन्ध हो) साधारण फल होगा ।

ग्रन्थकार ने 'दिक्बल' को बहुत महत्व दिया है। शुक्र यदि दशम भाव में हो, तो उसमें कोई दिक्बल नही होता और शनि यदि सप्तम भाव में हो तो उसमें 'पूर्ण दिक्बल' होता है, इसीलिए दशम में स्थित शुक्र का साधारण और सप्तम में स्थित शनि का उत्तम फल कहा है।

सप्तमस्थस्संहिकेयो योगदो भवति ध्रुवम् ।

तृतीय भाग्यगो मन्दो योगप्रद इति स्मृतः ॥ १४ ॥

भावार्थ – सप्तम भाव में राहु शुभ फल देता है । तृतीय और नवम में स्थित शनि बहुत धनदायक होता है ।

व्याख्या – यदि राहु को शनि की भाँति समझा जावे तो जैसा ऊपर कह आये हैं उस स्थान में राहु शुभ फलदायक होगा परन्तु हम समझते हैं कि शुभ फल देने के लिए राहु ऊपर किसी और स्वामी का प्रभाव होना चाहिए ताकि यह केन्द्र और कोण दोनों का फल दे सके।

शनि एक पापी ग्रह के नाते तृतीय भाव में स्थित होकर शुभ फल देगा ही । जहाँ तक शनि की नवम भाव में स्थिति का सम्बन्ध है, हम समझते हैं कि शनि को वहाँ उच्च राशि, स्वक्षेत्र अथवा मित्र राशि में होना चाहिए तभी उसका फल शुभ होगा, नहीं तो शनि भाग्य भवन की हानि करेगा ।

तृतीयाष्टम भाग्यस्थो गुरुर्योगप्रदो भवेत् ।

द्वादशस्थो यदि गुरुर्देवलोकं समश्नुते ॥ १५ ॥

भावार्थ – गुरु यदि तृतीय, अष्टम अथवा भाग्य भवन में स्थित हो तो अच्छा धन देता है । गुरु द्वादश भाव में हो तो जातक को मृत्यु के बाद स्वर्गलोक की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या –

- तृतीय भाव में गुरु हो, तो भाग्य, व्यापार और आय भावों को लाभ होगा।
- यदि अष्टम हो, तो धन और सुख भावों पर इसकी शुभ दृष्टि होगी।
- यदि नवम में हो तो लग्न और पंचम दो शुभ भावों पर इसका प्रभाव होगा ।
- द्वादश भाव अन्तिम भाव है, अतः मृत्यु के बाद की अवस्था का द्योतक है, अतः यहाँ पर गुरु जिसका नाम देवेन्द्र पूज्य अर्थात् स्वर्ग के राजा इन्द्र का पूज्य है इन्द्र लोक में अर्थात् स्वर्गलोक ले जावेगा ।

भाग्यराज्याधिपौ राज्ये भाग्यं वा यदि संस्थितौ ।

राजयोगमवाप्नोति महतों कीर्तिमश्नुते ॥ १६ ॥

भावार्थ – यदि नवम और दशम भावों के स्वामी मिलकर नवम अथवा दशम भाव में स्थित हों तो बहुत शुभ राजयोग की प्राप्ति तथा यश की प्राप्ति होती है।

राज्यस्था यदि भाग्येशः राज्येशो भाग्यगो यदि ।

राजयोगमवाप्नोति महतीं कीर्तिमश्नुते ॥ १७ ॥

भावार्थ – यदि नवम भाव का स्वामी दशम भाव में और दशम का स्वामी नवम में हो तो भी राजयोग और कीर्ति की प्राप्ति होती है ।

भाग्याधिपो भाग्यगतो राज्येशो राज्यगो यदि ।

राजयोगमवाप्नोति महतीं कीर्तिमश्नुते ॥ १८ ॥

भावार्थ – यदि नवम भाव का स्वामी नवम में हो और दशम का स्वामी दशम में, तो भी राजयोग के फल की प्राप्ति होती है ।

राज्येश पञ्चमेशौतु राज्ये वा पञ्चमेथवा ।

स्थितौ चेद्योगमाप्नोति महतीं कीर्तिमश्नुते ॥ १९ ॥

भावार्थ – यदि पंचम और दशम भाव के स्वामी मिलकर पंचम अथवा दशम भाव में स्थित हों, तो राजयोग और महान् कीर्ति की प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – दशम भाव केन्द्र है और पंचम त्रिकोण । उनका मिलकर पंचम अथवा दशम भाव में स्थित होना पाराशरीय नियमों के अनुसार राजयोग बनाता है ।

भाग्यराज्याधिपो यत्र सप्तमस्थौ च लग्नगौ ।

राजयोगमवाप्नोति महतीं कीर्तिमश्नुते ।। २० ।।

भावार्थ – नवम और दशम भाव के स्वामी यदि लग्न में अथवा सप्तम भाव में स्थित हों, तो राजयोग की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – केन्द्र और त्रिकोण के स्वामियों की युति का प्रभाव दोनों स्थितियों में लग्न पर पड़ेगा जिसके फलस्वरूप राजयोग की प्राप्ति होगी ।

रिपुसप्तम राज्येशाः केन्द्रस्था यदि कोणगाः ।

राजयोगं च लभते महतीं कीर्तिमाप्नुयात् ॥ २१ ॥

भावार्थ - यदि छठे, सातवें और दसवें भाव के स्वामी केन्द्र अथवा कोण स्थान में स्थित हों, तो जातक को राजयोग और कीर्ति को प्राप्ति होती है ।

व्याख्या – सातवें और दसवें केन्द्रों के स्वामी अपनी कोण स्थिति द्वारा केन्द्र और कोण में सम्बन्ध उत्पन्न करते हैं और इसीलिए राजयोग और कीर्ति देते हैं। यह बात तो समझ में आ सकती है, परन्तु इस योग में छठे भाव के स्वामी को सम्मिलित करने का भाव समझ में नहीं आता । षष्ठेश तो अपने अभावात्मक प्रभाव के कारण योग की सार्थकता में उलटा बाधा डालेगा । इसमें सन्देह नहीं कि छठा एक उपचय भाव है, परन्तु षष्ठेश का योग भी राजयोग दे यह बात साधारण नियमों के विरुद्ध है । संभव है, ग्रन्थकार ने षष्ठेश को इस संदर्भ में इसलिए शुभ मान लिया हो कि वह दशम भाव का भाग्याधिपति है ।

मेषे रवि कर्कटस्यो जीवचन्द्र तुला शनि

मकरस्यो भवेत्भौमो राजयोग उदीरितः ।। २२ ।।

भावार्थ – यदि सूर्य मेष में हो और चन्द्र और गुरु कर्क राशि में, शनि तुला में और मंगल मकर में हों तो राजयोग की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – इस योग में उच्च ग्रह एक दूसरे से केन्द्र में पड़ जाते हैं जिससे 'कारक' योग बनता है।

आप नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके इस पुस्तक के आनलाईन संस्करण को भी पढ सकते है ।

15. मेष लग्न | वृश्चिक लग्न
16. वृषभ लग्न | तुला लग्न
17. मिथुन लग्न | कन्या लग्न
18. कर्क लग्न | सिंह लग्न
19. धनु लग्न | मीन लग्न
20. मकर लग्न | कुंभ लग्न
21. अध्याय 2 | धन योग | विद्या | खान-पान
22. अध्याय 3 भ्रातृ-भाव |अध्याय 4 वाहन तथा भाग्य | अध्याय 5 शत्रु और रोग
23. अध्याय 6 स्त्री और काम | अध्याय 7 आयु और स्वास्थ्य
24. अध्याय 8 भाग्य योग | अध्याय 9 राज योग
25. अध्याय 10 तीर्थ स्नान | अध्याय 11 मृत्यु योग
26. अध्याय 12 दशा के परिणाम
27. अध्याय 13 साधारण योग | अध्याय 14 ग्रहमालिका योग | अध्याय 15 ग्रहों का आधिपत्य आदि
28. नियम अध्याय

तीर्थ स्नान

कर्मकारक देवेन्द्र पूजयस्य यदि विद्यते ।
संबन्ध कर्मनाथेन सत्कर्मनिरतो भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ - कर्मों के कारक गुरु का यदि युति दृष्टि आदि से दशम भाव के स्वामी से सम्बन्ध हो, तो जातक सदा सत्कर्म करने वाला होता है ।

व्याख्या - दशम भाव शुभ कर्मों का भाव है, इसीलिये इस स्थान का नाम "कर्म" भाव है। उधर ग्रहों में गुरु शुभ तथा निःस्वार्थ कर्मों का

प्रतिनिधि है, अतः सादृश्य सिद्धांतानुसार इन दोनों की युति शुभ कर्मों में प्रवृत्ति की सूचक होगी।

कळत्रपुत्र भाग्येशः गुरुकर्माषपती तथा ।

जलराशि स्थिता सर्वेन्योन्यसंगता यदि ॥ २ ॥

गुरुवाये च संप्राणी गंगास्यनदीषु च।

स्नानसिद्धिर्भवेत्सेव गंगास्नानं न सिद्धयति ॥ ३ ॥

भावार्थ – यदि सातवें, पाँचवें, नौवें और दसवें भाव के स्वामी और गुरु जलीय राशि में इकट्ठे हों तो जातक पुण्य तीर्थ की नदी में स्नान करेगा । यह स्नान गुरु दशा में होगा, परन्तु गंगा में स्नान न होगा ।

व्याख्या – नवम भाव और नवम से नवम अर्थात् पंचम इसी प्रकार दशम भाव और दशम से दशम अर्थात् सांतवा भाव तथा धर्म-कर्म का कारक गुरु ये सभी पुण्य कर्मों जैसे पवित्र नदियों में स्नान के द्योतक हैं, अतः उनका जलीय राशि में पारस्परिक सम्बन्ध पवित्र स्नान के देने वाला है ।

पुत्रदारेशवायेतु यात्राकार्य न सिद्धयति ।

पुण्यश्लोकस्य विष्णोश्च कथासु निरतो भवेत् ॥ ४ ॥

भावार्थ - यदि पंचम अथवा सप्तम भाव के स्वामी की दशा हो, तो तीर्थ यात्रा में सिद्धि नहीं मिलती, परन्तु इन दशाओं में धर्म शास्त्र और अवतारों के सम्बन्ध में श्रवण मिलता है ।

व्याख्या - पंचम और सप्तम भाव धर्म-कर्म के भाव हैं, परन्तु सीधे ढंग से नहीं बल्कि "भावात् भावम्" के सिद्धांतानुसार हैं। जैसा कि गत श्लोक की व्याख्या में हमने बताया है, अतः पूर्ण फलदायक नहीं।

युग्मजातस्य भाग्यस्थो गुरुमन्दौ तयोवंशा

काले भवति गंगायाः स्नानं भवति निश्चयः ॥ ५ ॥

भावार्थ - यदि मिथुन लग्न हो और शनि और गुरु नवम भाव में हों, तो अपनी दशा में गंगा स्नान देते हैं ।

व्याख्या - शनि की मूल त्रिकोण राशि नवम भाव में पड़ती है, अतः नवमेश होकर धर्म-कर्म से सम्बन्ध रखने के कारण शनि अपनी दशा में गंगा स्नान दे सकता है ।

इसी प्रकार गुरु दशम और दशम से दशम भाव का स्वामी होने के कारण शुभ कर्मों से सम्बन्धित है और इसलिए यह भी अपनी दशा में अपना और नवमेश का फल करते हुए गंगा स्नान दे सकता है।

मेषलग्ने तु जातस्य शुक्रेज्यार्यम्णो यदि ।

राज्यस्थास्तद्द शाकाले गंगास्नानं भविष्यति ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि शुक्र गुरु और सूर्य मकर में दशम स्थान में हों तो यह ग्रह अपनी अपनी दशा में गंगा स्नान देते हैं ।

व्याख्या – यह युति नवम, पंचम और सप्तम भाव के स्वामियों की युति है और इन्हीं स्थानों में क्रमशः इनकी मूल त्रिकोण राशियाँ हैं । जैसा कि हम देख चुके हैं नवमेश, पंचमेश (नवम से नवम का स्वामी) और सप्तमेश (दशम से दशम का स्वामी) सभी धर्म के द्योतक हैं, अतः ये अपनी दशा में गंगा स्नान दे सकते हैं ।

कर्माधिपो गुरुयुतः कर्मप्राबल्यमादिशेत् ।

षष्ठव्ययस्थः कर्मशः कर्महीनो भवेन्नरः ॥ ७ ॥

भावार्थ – यदि दशम भाव का स्वामी गुरु से युक्त हो, तो जातक बहुत धार्मिक और यज्ञीय कर्मों के करने वाला होता है। यदि दशमेश छठे अथवा द्वादश भाव में स्थित हो, तो जातक कर्महीन अर्थात् शुभ धार्मिक कर्मों से हीन होता है ।

व्याख्या – कुण्डली में छठा और बारहवां भाव अभाव तथा कमी के भाव हैं, अतः यदि कर्मेश का इन भावों अथवा इन भावों के स्वामियों

से युति आदि सम्बन्ध होगा, तो कर्मेश की धर्म-कर्म करने की शक्ति का ह्रास होगा।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

मृत्यु योग

व्ययेशस्य दशाकाले धनेशो भारको भवत् ।
द्वितीयेश दशाकाले व्ययेशो मारको भवेत् ॥ १ ॥

भावार्थ – द्वादश भाव के स्वामी की दशा हो और दूसरे भाव के स्वामी की भुक्ति अथवा द्वितीय भाव के स्वामी की दशा ही और बारहवें भाव के स्वामी की भुक्ति, तो वह समय मारक अर्थात् मृत्यु देने वाला होता है ।

व्याख्या – व्ययेश लग्न से बारहवें भाव का स्वामी होने से लग्न अर्थात् आयु के अभाव (मृत्यु) का सूचक है। इसी प्रकार द्वितीयेश तृतीय भाव (आयु) के व्यय भाव का स्वामी होने से तृतीय (आयु) का अभाव (मृत्यु) है, अतः द्वितीय और द्वादश भावों के स्वामियों की दशा मृत्युकारक सिद्ध हो सकती है।

व्ययनाथ दशाकाले द्वितीयेशेन संगताः ।

द्वितीयेशेन दृष्टाश्च मारकप्रबलताः ।। २ ।।

भावार्थ – यदि द्वादश भाव के स्वामी की महादशा हो और किसी ऐसे ग्रह की भुक्ति जो द्वितीयेश के साथ हो अथवा उससे दृष्ट हो, तो वह भुक्ति मारक सिद्ध हो सकती है।

व्याख्या – द्वितीय भाव के स्वामी से प्रभावित ग्रह भी मारक होता है। यह इस श्लोक का भाव है।

द्वितीयेश दशाकाले व्ययस्थनस्थिता खगाः ।

व्ययाधिपतिना दृष्टाः प्रबला मारकश्रुताः ॥ ३ ॥

भावार्थ – यदि दूसरे भाव के स्वामी की दशा हो और भुक्ति ऐसे ग्रह की हो जो व्यय स्थान में स्थित होकर व्ययेश से दृष्ट है तो इस ग्रह (द्वादशस्थ ग्रह) की भुक्ति में मृत्यु हो सकती है।

व्याख्या – यहां भी बारहवें भाव और उसके स्वामी से प्रभावित ग्रह भी उतने ही मारक हैं जितना कि द्वादशेश ।

व्ययनाथ दशकाले तत्रस्थाः पापिनाः खगाः ।

तेषां अन्तर्दशाकाले मारकास्तु भवन्ति ते ॥ ४ ॥

भावार्थ – यदि द्वादशेश की दशा हो और द्वादश भाव में स्थित एक ऐसे ग्रह की भुक्ति हो जो पापी हो, तो उस पापी की भुक्ति में मृत्यु हो सकती है ।

व्याख्या – पापी ग्रहों से तात्पर्य उन ग्रहों से है जो पाराशरीय नियमों के अनुसार लग्न विशेष के लिये पापी बनते हों। जैसे तुला लग्न के लिए गुरु तृतीयेश और षष्ठेश होने से पापी है । ऐसे ग्रह मृत्यु लाने में

कारण होते हैं और जब द्वादश भाव में स्थित होंगे, तो उस भाव की मारक शक्ति को पाकर प्रबल मारक सिद्ध होंगे।

द्वितीयराशिस्थितपापलेटा दशाविपाके व्यवनाथ संगताः।

तन्भुक्तिकाले च त एव पापिनो प्रहस्तथा मारकनायकस्युः ।। ५ ।।

भावार्थ – यदि द्वितीय भाव में पापी ग्रह स्थित हों और उनके साथ द्वादश भाव का स्वामी भी हो, तो वे ग्रह अपनी दशा भुक्ति में मृत्यु दे सकते हैं।

व्याख्या – पापी ग्रह की जब दशा होगी तो वह द्वितीय भाव और द्वादशेश दोनों का बुरा फल करेगा । इसी प्रकार पापी ग्रह की जब अन्तर्दशा होगी, तो वह भी द्वितीय भाव और द्वादशेश के कारकत्व का फल करेगा ।

व्ययराशिस्थ पापिनां दशाकाले तु मारकः ।

द्वितीयाधिप संबन्धी सचराः पापिनो ग्रहाः ॥ ६ ॥

भावार्थ – यदि (पाराशरीय नियमों के अनुसार) पापी ग्रह द्वादश भाव में हो और उसकी दशा हो और भुक्ति एक ऐसे पापी ग्रह की हो जिसको द्वितीय भाव का स्वामी अपनी युति अथवा दृष्टि से प्रभावित करता हो, तो भुक्ति मारक सिद्ध हो सकती है ।

व्याख्या - यहाँ भी मारकेश से सम्बन्धित ग्रहों की दशा को मारक दशा बतलाया है ।

अष्टमेश दशाकाले तत्भक्तौ सोऽपि मारकः ।

षष्ठेशवाये निधनं रन्ध्रेशान्तर्हृतो भवेत् ॥ ७ ॥

भावार्थ - अष्टमेश की दशा और अष्टमेश ही की भुक्ति मारक सिद्ध हो सकती है। छठे भाव के स्वामी की दशा में अष्टमेश की भुक्ति भी मृत्यु दे सकती है।

व्याख्या - इस श्लोक से पता चलता है कि षष्ठेश और अष्टमेश मिलकर आयु के लिये कितने हानिकारक सिद्ध हो सकते हैं।

अष्टमेश दशाकाले षष्ठराशिस्थ पापिनाम् ।

हृतौ जातस्य निधनं वदन्ति विबुषोत्तमाः ॥ ८ ॥

भावार्थ - अष्टमेश की दशा में छठे भाव में पड़े हुए पापी ग्रहों की भुक्ति मृत्यु दे सकती है।

व्याख्या - यहाँ भी पापी ग्रह छठे घर में बैठकर मारक सिद्ध होते हैं । यह सिद्धान्त जतलाया है ।

षष्ठनाथ दशाकाले अष्टमस्थ खगस्य च ।

हृतौं जातस्य निधनं वदन्ति विबुधोत्तमाः ॥ ९ ॥

भावार्थ – छठे भाव के स्वामी की दशा में अष्टम भाव में स्थित ग्रह की भुक्ति मृत्यु दे सकती है ।

व्याख्या – इस श्लोक से ऐसा प्रतीत होता है कि अष्टम भाव में स्थित ग्रह भी मारकेश का कार्य करता है ।

अष्टमेश दशाकाले अष्टमेशेन वीक्षिताः ।

षष्ठेश संगता ये च तान्वदन्ति हि मारकान् ॥ १० ॥

भावार्थ – यदि अष्टम भाव के स्वामी की दशा हो और ऐसे ग्रह की भुक्ति हो जो या तो अष्टमेश से दृष्ट हो या षष्ठेश के साथ हो तो यह स्थिति मारक सिद्ध हो सकती है ।

व्याख्या – तात्पर्य यह है कि षष्ठेश से प्रभावित ग्रह भी मारक सिद्ध हो सकता है ।

अष्टमास्थितपापस्य दशाकाले वदन्ति हि ।

षष्ठस्थानपतेरन्तर्दशाकालो हि मारकः ।। ११ ।। .

भावार्थ – अष्टम भाव में स्थित पापी ग्रह की दशा हो और छठे स्थान के स्वामी की भुक्ति तो मृत्यु का समय कहा है ।

व्याख्या - इस श्लोक से पता चलता है कि कम से कम अष्टमेश की दशा में षष्ठेश की भुक्ति मारक है, चाहे अपने आपमें षष्ठेश की भुक्ति मारक न भी हो ।

षष्ठस्थितस्य पापस्य दशाकाले वदन्ति हि ।

अष्टमाधिपतेरन्तर्दशाकालो हि मारकः ॥ १२ ॥

भावार्थ - छठे स्थान में पड़े हुए पापी ग्रह की दशा में अष्टमेश की भुक्ति मृत्यु देती है ।

व्याख्या - यहां भी पापी ग्रह से पापी है। ऐसे पापी का छठे भाव से तात्पर्य आधिपत्य द्वारा प्रभावित होना उसमें मारक शक्ति का संचार करता हैं ।

षष्ठस्थितस्य पापस्य दशाकालो वदन्ति हि ।

अष्टमस्थित रन्ध्रेश भुक्तिकालो हि मारकः ।। १३ ।।

भावार्थ - यदि छठे भाव में पापी ग्रह हो और उसकी महादशा हो तो अष्टम में पड़े अष्टमेश ही की भुक्ति मारक सिद्ध होती हैं ।

व्याख्या - इस श्लोक से पता चलता है कि ग्रन्थकार की सम्मति में अष्टमेश चाहे अष्टम स्थान में अपनी ही राशि में क्यों न हो, मारक का कार्य करता है ।

अष्टमस्थित पापस्य दशाकाले वदन्ति हि ।

षष्ठस्थितस्य पाषस्य भुक्तिकालो हि मारकः ॥ १४ ॥

भावार्थ – एक पापी ग्रह अष्टम भाव में हो और इसकी महादशा हो और एक पापी ग्रह छठे स्थान में स्थित हो और उसकी भुक्ति हो, तो यह समय मृत्यु कारक कहा है।

व्याख्या – इस श्लोक का भाव यह है कि छठे अथवा आठवें भाव में स्थित पापी ग्रह अपनी दशा अथवा भुक्ति में मृत्यु देते हैं । पापी से तात्पर्य आधिपत्य द्वारा पापी से है ।

बुधशुक्रौ पञ्चमस्थावन्योन्यौ मारकौ स्मृतौ ।

बुधदाये तु शुक्रस्तु शुक्रदाये बुधस्तथा ।। १५ ।।

भावार्थ – यदि बुध और शुक्र पाँचवें भाव में इकट्ठे हों, तो शुक्र बुध की दशा में और बुध शुक्र की दशा में मारक सिद्ध होगा ।

व्याख्या – यह श्लोक स्पष्ट नहीं है। इस श्लोक का अर्थ तभी बन सकता है जबकि बुध और शुक्र दोनों मारक हों। ऐसी स्थिति में बुध की और शुक्र की दशा भुक्ति मारक सिद्ध हो सकती है ।

क्रूराधिपत्य युक्तस्तु कुजः पञ्चमगो यदि ।

कुजदाये तु संप्राप्ते करोति निधनं कुजः ।। १६ ।

भावार्थ – यदि पापी भावों का स्वामी होकर मंगल पंचम भाव में स्थित हो, तो वह अपनी दशा में मृत्यु देता है ।

व्याख्या – कोण में स्थित ग्रहों का लग्न पर प्रभाव माना गया है । मंगल नैसर्गिक और आधिपत्य दो रूपों से क्रूर होता हुआ पंचम में बैठकर लग्न को प्रभावित करेगा जिससे मृत्यु होगी ।

अधिकाराच्छुभो मन्दो मारक ग्रह संयुतः ।

अतीव बलवान्मृत्यो मारक प्रबलस्मृतः ।। १७ ॥

भावार्थ – शनि यदि शुभ भावों का स्वामी भी हो, परन्तु मारक ग्रह के साथ स्थित हो तो अपनी दशा भुक्ति में मृत्यु देता है ।

व्याख्या – इस श्लोक से पता चलता है कि ग्रन्थकार की सम्मति में शनि की आयु संबन्धी अनिष्टकारी प्रवृत्ति तब भी बनी रहती है जब वह किसी मारक ग्रह के साथ स्थित हो ।

लग्नस्थ रन्ध्रनाथस्य दशाकाले तु मारकः ।

रन्ध्रेश एव भवतीत्याहुर्जातक कोविदः ।। १८ ।।

भावार्थ – अष्टमेश लग्न में स्थित हो, तो भी उसकी दशा मारक सिद्ध होती है ।

व्याख्या – अष्टम भाव का आधिपत्य बुरा है । उसका प्रभाव लग्न पर पड़ने से लग्न प्रदर्शित आयु की हानि होती है ।

द्वत्रयाणां पुत्राणां संप्राप्ते राहुदायके ।

पितुर्निधनमित्याहुस्तद्दशामध्य एव च ।। १९ ॥

भावार्थ – यदि किसी व्यक्ति के दो अथवा तीन पुत्रों को एक ही समय राहु की दशा चल रही हो, तो उस दशा में पिता की मृत्यु होती है।

व्याख्या – ऐसी राहु की दशा पिता के लिए क्यों मत्यु कारक सिद्ध होती है इसमें हेतु स्पष्ट नहीं है । हो सकता है कि चूँकि राहु सूर्य का शत्रु है । उसकी दशा में सदा सर्वदा सूर्य को हानि पहुँचती हो और इतनी व्यापक हानि पिता की मृत्यु की सूचक हो ।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

दशा के परिणाम

शुक्रान्तरे शनेये शुक्रदाये तथा शने ।

अन्तर्द्दशायां संप्राप्ते योगहीनो भवेन्नरः ॥ १ ॥

भावार्थ – शनि की दशा में शुक्र की भुक्ति और शुक्र की दशा में शनि की भुक्ति हो तो मनुष्य की आर्थिक स्थिति खराब होती है ।

व्याख्या – लग्नों को ध्यान में रखे बिना यह कहना कि शनि में शुक्र अथवा शुक्र में शनि की दशा खराब होती है एक अतिशयोक्ति है जिसे ठीक मानना कठिन है । किसी लग्न विशेष के लिए ये अच्छे या बुरे हों वह बात दूसरी है । देखिए अगला श्लोक ।

शनिदये तु शुक्रस्तु शुक्रदाये शनिस्तथा ।

मीने धनुषि जातस्य योगदो भवति ध्रुवम् ॥ २ ॥

भावार्थ – धनु अथवा मीन लग्न हो तो शुक्र महादशा में शनि की भुक्ति अथवा शनि की महादशा में शुक्र की भुक्ति बहुत धनदायक होती है ।

व्याख्या – धनु लग्न हो, तो धन की दृष्टि से शुक्र लाभेश होता हुआ शुभ फल करता है और शनि उपचय (तृतीय) भाव का स्वामी शुभ होगा। यदि मीन लग्न हो, तो लाभेश शनि शुभ होगा और शुक्र तृतीयेश होकर (उपचय भाव का स्वामी) शुभ होगा। संभवतया शुक्र और शनि

की शुभता में यह कारण ग्रन्थकार के मन में हो। यद्यपि तृतीयेश को पाराशर ने पापी माना है ।

षष्ठाष्टमव्ययस्थ रन्ध्रेशस्य हृतियंदा ।

वष्ठाष्टमव्ययेशानां भुक्तिकालो हि मारकः ।। ३ ॥

भावार्थ – यदि आठवें भाव का स्वामी छठे, आठवें अथवा बारहवें हो तो षष्ठ, अष्टम अथवा द्वादश भाव के स्वामी की भुक्ति मारक सिद्ध हो सकती है ।

व्याख्या – जब अष्टमेश छठे हो तो षष्ठेश अपना और अष्टम दोनों का बुरा फल करता हुआ मारक होगा। जब अष्टमेश द्वादश में होगा तब द्वादशेश अपना और अष्टम भाव का अनिष्ट फल करता हुआ मारक होगा। इस संदर्भ में अष्टमेश अष्टम में पड़ा हुआ अर्थात् स्वक्षेत्री भी कोई विशेष अच्छा नहीं ।

राज्यविक्रमपत्योश्च संबंधो यदि विद्यते ।

राज्येशवाये च योगस्सुयोगो विक्रमेशतुः ।। ४ ।।

भावार्थ – यदि दशमेश और तृतीयेश में परस्पर युति आदि सम्बन्ध हो, तो राज्येश अर्थात् दशम भाव के स्वामी की दशा में शुभ फल की प्राप्ति होगी और तृतीय भाव के स्वामी की दशा में उससे भी अधिक शुभ फल की प्राप्ति होगी ।

व्याख्या – दशम और तृतीय दोनों उपचय भाव तृतीय थोड़ा और दशम बहुत फल देने वाला भाव है। यदि भुक्ति नाथ के फल को मुख्य माना जावे तो दशम भाव की महादशा में तृतीयेश का फल थोड़ा होगा, परन्तु तृतीयेश की दशा में दशमेश की भुक्ति का फल बहुत अच्छा होगा । ग्रंथकार का यही आशय प्रतीत होता है।

अपत्य भार्य भाग्येशाः निजराशिसु संस्थिताः ।

तशान्तरंशा प्राप्ते गंगस्नन्नं समश्नुते ।। ५ ॥

भावार्थ – यदि पाँचवें, सातवें तथा नौवें भाव के स्वामी अपनी अपनी राशियों में पंचम, सप्तम तथा नवम में स्थित हों तो एक की दशा और दूसरे की भुक्ति में गंगा स्नान की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – जैसा कि हम श्लोक संख्या ५ की व्याख्या में उल्लेख कर चुके हैं पंचम, सप्तम और नवम तीनों के तीनों भाव धर्म तथा शुभ कर्म के द्योतक हैं जिनमें गंगा स्नान को सम्मिलित समझा जाना चाहिए, अतः इनमें से किसी की भी दशा अथवा भुक्ति गंगा स्नान देने में उपयुक्त होगी ।

सप्तमस्य विलग्नस्य दाये स्वाजित भाग्यभाक् ।

दारास्थ भाग्यराशीशदाये स्वाजित भाग्यभाक् ।। ६ ।।

भावार्थ – यदि लग्नेश सप्तम भाव में हो तो लग्नेश की दशा में जातक निज द्वारा उत्पन्न किए धन को पाता है। इसी प्रकार यदि नवम भाव

का स्वामी सप्तम भाव में हो तो उसकी दशा में भी व्यक्ति अपने ही पुरुषार्थ से धन कमाता है।

व्याख्या – सप्तम भाव को 'वीर्य' भाव कहते हैं । 'वीर्य' शब्द से न केवल सन्तानोत्पत्ति में काम आने वाले वीर्य से तात्पर्य है बल्कि उत्साह और पुरुषार्थ भी इस शब्द का अर्थ है, अतः जब लग्नेश (धन कमाने वाला अपना आप) सप्तम में होगा तो अपने ही उत्साह से लग्न प्रदर्शित धन की प्राप्ति होगी । इसी प्रकार जब नवमेश सप्तम भाव में होगा तो भी भाग्य की प्राप्ति अपने वीर्य द्वारा होगी।

राहुर्द्दशायां संप्राप्ते राहुकेतोस्तथा शनेः ।

रवेरन्तर्भुक्तिकाले पिता मरणमाप्नुयात् ।। ७ ।।

भावार्थ – राहु–केतु अथवा शनि की दशा में सूर्य की अन्तर्दशा आने पर पिता का मरण होता है ।

व्याख्या – चूँकि दशानाथ राहु, केतु और शनि सभी सूर्य के शत्रु हैं सूर्य की भुक्ति, सूर्य अर्थात् पिता के लिए हानिप्रद सिद्ध हो सकती है। कुछ अनुवादकों ने राहु की दशा में राहु, केतु, सूर्य तथा शनि की भुक्ति को पिता के लिए अनिष्टकारी माना है । यह श्लोक का आशय प्रतीत नहीं होता, क्योंकि श्लोक में 'तथा' शब्द का प्रयोग शनि केतु को भी राहु की तरह दशानाथ बताता है ।

केतुर्द्दशायां संप्राप्तौ पितुमरणमुच्यते ।

भौममन्दरवीणां च राहोरन्तर्द्दशासु च ॥ ८ ॥

धरासूनुर्दशाकाले पितुनिचनमुच्यते ।

राहुकेशनीनां च रन्तर्दशासु हि ॥ ९ ॥

शनैर्महई शाकाले पितु निधनमुच्यते ।

राहुभौमरवीणां च केतोरन्तवंशासु हि ॥ १० ॥

(क) मंगल की दशा हो और राहु, केतु शनि अथवा सूर्य की भुक्ति हो ।

(ख) शनि की दशा हो और राहु, सूर्य, मंगल, केतु की भुक्ति हो।

(ग) केतु की दशा हो और मंगल, शनि, सूर्य अथवा शुक्र की भुक्ति हो तो पिता का मरण होता है ।

व्याख्या – मंगल, शनि, अथवा केतु की महादशा में शेष पापी ग्रहों की अन्तर्दशा में पिता ही की मृत्यु होती है। यह विचारणीय है क्योंकि कम से कम सूर्य का पाप प्रभाव में आना तो अनिवार्य है, अतः राहु, केतु, मंगल अथवा शनि में सूर्य की भुक्ति हो तो पिता के लिये कुछ हानिकारक सिद्ध हो सकती है।

राहो महाकालात्पूर्वन्तु निधनं पितुः ।

धरासूनुर्दशाच्छिद्रकाले भवति निश्चयः ॥ ११ ॥

भावार्थ – मंगल की दशा की समाप्ति और राहु की दशा के आरम्भ में पिता की मृत्यु होगी।

व्याख्या - एक पापी ग्रह की दशा का अन्त और साथ ही दूसरे पापी ग्रह की दशा का आरम्भ जीवन के लिए हानिकारक कहा है, परन्तु यह हानि पिता ही को हो और किसी सम्बन्धी को न हो। यह विचारणीय है।

क्रूरप्रहर्वशाकाले राहोरन्तरंशा यदा ।

तथैव निधनं बूयुः पितुर्जातक कोविदाः ॥ १२॥

भावार्थ - क्रूर ग्रह की दशा ओर राहु की अन्तर्दशा में पिता की मृत्यु कही है।

व्याख्या - यह गत तीन श्लोकों में प्रयुक्त सिद्धान्त ही का वर्णन है ।

गुरुशुको वृश्चिकस्बो शुक्रवाये समागमे।

राजयोगकरश्शुको भवेदेव न संशयः ॥ १३॥

भावार्थ - यदि शुक्र गुरु के साथ वृश्चिक राशि में स्थित हो तो शुक्र की दशा में राजयोग की प्राप्ति होती है।

व्याख्या - गुरु और शुक्र किन-किन भावों के स्वामी हैं इस बात का उल्लेख ग्रन्थकार ने नहीं किया। ऐसा भी है कि ग्रह प्रायः जिस दूसरे ग्रह के साथ होते हैं उसी का फल करते हैं, अतः यदि इस नियम को

ध्यान में रखा जाये तो शुक्र अपनी दशा में गुरु का फल करेगा और गुरु चूंकि धन का कारक है और अपनी राशि मीन को देख भी रहा है, इसलिए धन के विषय में शुभ फल देगा।

रस्सोमसुतस्यापि संबन्धे यदि विद्यते।

बुधदाये प्रबलदो रवे दायस्थु मध्यमः ॥ १४ ॥

भावार्थ – सूर्य और बुध का यदि परस्पर युति आदि से सम्बन्ध हों तो बुध की महादशा में प्रबल रूप से शुभ फल की प्राप्ति होगी। सूर्य की महादशा में मध्यम रूप से होगी ।

व्याख्या – यहां भी वही सिद्धान्त लागू किया गया है जिसका उल्लेख गत श्लोक की व्याख्या में किया गया है। सूर्य चूँकि नैसर्गिक रूप से बड़ा भी है और स्वतंत्र भी । अतः इसका फल बुध की दशा में उत्तम होगा और बुध जो सूर्य से छोटा और परतंत्र भी है उसका फल मध्यम दर्जे का रहेगा । निकृष्ट फल इसलिए नहीं कि महादशा नाथ तो बड़ा ग्रह रहेगा ।

चन्द्रमंगळ संबन्धे चन्द्रवाये बहुप्रदः ।

कुजदाये तु संप्राप्ते कुजवायस्तु मध्यमः ॥ १५ ॥

भावार्थ – चन्द्र और मंगल की युति हो तो चन्द्र की दशा में मंगल की भुक्ति बहुत अच्छा फल करती है और यदि मंगल की दशा में चन्द्र की भुक्ति हो तो फल मध्यम रहेगा।

व्याख्या – यहाँ भी वही सिद्धान्त प्रयोग में लाया गया है। जिसका उल्लेख हमने श्लोक १३ की व्याख्या में किया है। अतः जब मंगल की महादशा में चन्द्र की भुक्ति होगी तो मध्यम फल होगा। क्योंकि चन्द्र सदा अपनी कलाओं में वृद्धि ह्रास के कारण अधिक अवसरों पर निर्बल होगा ।

गुरुशन्योश्च संबन्धे शनिदायो विशेषदः ।

गुरुवाये च संप्राप्ते तद्दशा मध्यमास्मृता ॥ १६ ॥

भावार्थ – गुरु और शनि यदि युति आदि द्वारा परस्पर सम्बन्धित हों तो शनि की दशा में विशेष योग की प्राप्ति होगी, परन्तु गुरु की दशा मध्यम फल देगी ।

व्याख्या – पिछले तीन श्लोकों पर व्याख्या देखिए ।

गुरोरङ्गारकस्यापि संबन्धे यदि विद्यते ।

भौमवायास्तूत्तमस्याद् गुरुवायस्तु मध्यमः ॥ १७ ॥

भावार्थ – गुरु और मंगल का पारस्परिक युति आदि संबन्ध होने पर मंगल की महादशा में बहुत अच्छे फल की प्राप्ति रहेगी और गुरु की दशा मध्यम दर्जे की रहेगी।

व्याख्या – यहाँ भी उसी सिद्धान्त का प्रयोग है जिसका उल्लेख हम गत चार श्लोकों में करते चले आ रहे हैं ।

गुरोस्सुधांशु संबन्धे चन्द्रदायो विशेषदः ।

गुरोर्दशा संप्राप्ती गुरुदायस्तु मध्यमः ॥ १८ ॥

भावार्थ - यदि गुरु और चन्द्र का युति आदि द्वारा पारस्परिक संबंध हो तो चन्द्रमा की दशा में उत्तम फल और गुरु की दशा में मध्यम फल की प्राप्ति होती है।

व्याख्या - श्लोक १४ पर व्याख्या देखिये ।

केन्द्रकोणस्थ राहोश्च दायकाले समागमे ।

स्वतन्त्र राजयोगं च महत्कीर्ति समश्नुते ॥ १९ ॥

भावार्थ - राहु यदि केन्द्र अथवा कोण में स्थित हो तो अपनी दशा में राजयोग और महान् यश देता है ।

व्याख्या - हमारा विचार है कि राहु यदि केन्द्र में हो तो उसे त्रिकोण भाव के स्वामी से शुभ सम्बन्ध स्थापित करना होगा तब वह राजयोग का फल करेगा। इसी प्रकार राहु यदि कोण स्थान में है तो उस पर किसी केन्द्र के स्वामी ग्रह का प्रभाव होना चाहिये । तात्पर्य यह है कि राहु चूंकि एक छाया ग्रह है उस पर केन्द्र और त्रिकोण दोनों का प्रभाव हो तो वह राजयोग का फल करता है।

गुरोर्बुषस्य शुक्रस्य संबन्धो यदि विद्यते ।

विशेष धनयोगश्च कीर्तिमान्भाग्यवान् भवेत् ॥ २० ॥

भावार्थ – यदि गुरु, बुध और शुक्र परस्पर युति आदि से सम्बन्ध स्थापित करें तो यह योग बहुत धन, कीर्ति और भाग्य देने वाला है ।

व्याख्या – इस योग में भाग लेने वाले सभी ग्रह नैसर्गिक शुभ ग्रह हैं, स्वयं भी और दूसरों की संगति से भी, इसलिये वे अपनी–अपनी दशा में अन्य शुभ ग्रहों ही का फल करेंगे ।

शुक्रस्य यदि संबन्धो बुधेन गुरुणापि वा ।

शुक्रवाये च संप्राप्ते धनयोगं लभेन्नरः ॥ २१ ॥

भावार्थ – शुक्र यदि युति आदि के द्वारा गुरु और बुध से सम्बन्धित हो तो शुक्र की दशा में बहुत शुभ फल की प्राप्ति होती है।

व्याख्या – शुक्र अपनी महादशा में गुरु और बुध का फल करेगा । गुरु शुभ ग्रह भी है और धनकारक भी। बुध ने गुरु साथ मिलकर गुरु ही का शुभ रूप धारण करना है । अतः शुक्र की दशा बहुत शुभप्रद होगी !

गुरुदाये च संप्राप्ते धनहीनो भवेन्नरः ।

बुधस्यदाये संप्राप्ते मिश्रयोगो भवेद ध्रुवम् ।। २२ ॥

भावार्थ - गत श्लोक को दृष्टि में रखकर कहते हैं कि गुरु की दशा में व्यक्ति धनहीन होगा और बुध की दशा में मिश्रित अर्थात् अच्छा और बुरा दोनों फल पावेगा ।

व्याख्या – ऐसा प्रतीत होता है कि इस श्लोक का फल कहते समय ग्रन्थकार के मन में दशानाथ के साथ भुक्तिनाथ की मैत्री अथवा शत्रुता का विचार था। बुध की दशा में गुरु और शुक्र का फल होता है (देखिये श्लोक १३ पर व्याख्या) ।

गुरु शुक्र का शत्रु है, परन्तु बुध शुक्र का मित्र, इसलिये बुध की दशा मिश्रित फल करेगी, परन्तु जब गुरु की दशा होगी तो फल शुक्र और बुध करेंगे। शुक्र और बुध दोनों गुरु के शत्रु हैं, अतः फल निकृष्ट रहेगा ।

रम्यादि प्रयोगसंयोगे रवेदय समागमे ।

रवियोगदोयुक्तः इतरे मध्यमास्मृताः ।। २३ ।।

भावार्थ - जब सूर्य की किसी अन्य ग्रह से युति हो तो सूर्य की दशा शुभ फल देती है, परन्तु अन्य ग्रहों की दशा मध्यम फलदायक होती है ।

व्याख्या – सब ग्रह जब सूर्य के साथ होते हैं तो अपने तेज को खो देते हैं । अतः उनकी दशा में उन पर पड़ने वाले सूर्य के प्रभाव के कारण उनकी दशा साधारण ही सी रह जाती है। सूर्य की दशा में सूर्य को अन्य ग्रह बुध, गुरु, शुक्र, चन्द्र अपनी युति से लाभ पहुँचायेंगे ।

मंगल की युति यद्यपि एक पापी की युति होगी, परन्तु एक मित्र की युति होगी। शनि की युति कुछ हानिप्रद हो सकती है, परन्तु शनि एक छोटा ग्रह है वह सूर्य को अकेला अधिक हानि न पहुँचा सकेगा ।

प्रहैरन्यैश्च राहोस्तु संबन्धो यदि विद्यते ।

यो ग्रहः प्रवतस्तेषां तत्फलं च ददाति सः ।। २४ ।।

भावार्थ - यदि राहु का अन्य ग्रहों से युति आदि द्वारा सम्बन्ध हो तो सम्बन्ध करने वाले ग्रहों में जो सबसे बलवान ग्रह होगा उसका फल राहु करेगा ।

व्याख्या – राहु चूँकि एक छाया ग्रह है यह उसी प्रकार का फल करेगा जिस प्रकार का कि प्रभाव इस पर पड़ रहा होगा ।

राहु सूर्यस्तथामन्वस्तु तृतीये यदि संस्थितः ।

राहोर्वशा विपाकस्तु भाग्य विक्रमयोगवः ॥ २५ ॥

भावार्थ - यदि राहु, सूर्य और शनि तृतीय भाव में स्थित हों तो राहु अपनी दशा में भाग्य और पराक्रम देगा ।

व्याख्या – यह श्लोक गत श्लोक में वर्णित सिद्धान्त का एक उदाहरण है। राहु को सूर्य का अथवा शनि का फल करना है जो भी सूर्य तथा शनि में बलवान हो । सूर्य बड़ा ग्रह होने से शनि से अधिक बलवान

होगा अतः वह अपना फल अर्थात् पराक्रम और राज्य यश आदि देगा ।

राहोर्दशा विपाकेतु विक्रमस्थो बुधोयदि ।

धैर्यहीनो भवेज्जात इति जातककोविदाः ।। २६ ॥

भावार्थ – यहाँ राहु की तृतीय स्थिति से ताप्पर्य है । अत: जब राहु और बुध तृतीय भाव में होंगे तो राहु स्वयं भी शनि की भाँति एक अभाव का ग्रह है और बुध भी राहु के साथ राहु जैसा होगा तो स्पष्ट है कि दोनों के सम्मिलित प्रभाव से तृतीय भाव के गुण – 'धैर्य' का ह्रास होगा ।

साधारण योग

तत‍द्भावेश्वराः खेटा: तत्तत्कारक संयताः ।

तस्य भावस्य सर्वस्य प्राबल्यं प्रोच्यते बुधः ॥ १ ॥

भावार्थ – यदि किसी भाव का स्वामी उसी भाव के कारक के साथ स्थित हो तो इस योग द्वारा उस भाव की वृद्धि कहनी चाहिये जिस भाव के स्वामी के साथ कारक स्थित है।

तृतीयाष्टमलाभाधिपतित्वन्तु स दोषकम् ।

सुतभाग्याधिपत्यन्तु खेटानां शुभदं भवेत् ॥ २ ॥

भावार्थ – तृतीय, अष्टम और एकादश भाव का स्वामी होना दोष युक्त है, परन्तु पांचवें और नौवें भाव का स्वामी होना शुभफल प्रद है ।

तथापि च गुरोराशिभ्रातृ षष्ठाष्टमेशितः ।

रन्ध्रस्थान स्थितश्चापि योंगवा भवति ध्रुवम् ॥ ३॥

भावार्थ – परन्तु गुरु यद्यपि तीसरे, छठे अथवा अष्टम का स्वामी हो अथवा अष्टम भाव में स्थित भी क्यों न हो शुभ फल करता है।

व्याख्या – ग्रन्थकार ने गुरु के तृतीय और षष्ठ के स्वामी होने के सम्बन्ध में पहले ही अपनी सम्मति अध्याय १ तुला लग्न श्लोक १ में दी हुई है। इसी प्रकार अष्टम गुरु के सम्बन्ध में देखिये अध्याय ८ श्लोक १५ ।

जब गुरु छठे और नौवें भाव का स्वामी हो तो यद्यपि इसकी मूल त्रिकोण राशि एक बुरे (छठे) भाव में पड़ती है तो भी गुरु थोड़ा

अच्छा फल ही करता है, क्योंकि यह साथ-साथ शुभतम भाव (नवम) का भी स्वामी हो जाता है।

इसके अतिरिक्त षष्ठ उपचय भाव है- नवम भाग्य भवन है और गुरु धन कारक सबमें 'धन' साझा है, अतः गुरु धनदायक सिद्ध होता है।

जब गुरु पंचम और अष्टम का स्वामी होता है तो उसकी मूल त्रिकोण राशि एक शुभ भाव (पंचम) में पड़ती है। अतः यहाँ भी गुरु शुभ फल करता है।

शुक्रस्य षष्ठसंस्थानं योगदं भवति ध्रुवम् ।

व्यवस्थितस्य शुक्रस्य यथा योगं वदन्ति हि ॥ ४॥

भावार्थ - शुक्र छठे स्थान में स्थित होकर उतना ही योगप्रद है जितना कि वह द्वादश भाव में स्थित होकर होता है।

राज्यलाभ चतुर्थेषु पञ्चमे वा स्थितो यदि ।

राहुर्येगप्रदः प्रोक्तो विद्वद्भिर्जर्तक कोविदै ॥५॥

भावार्थ - राहु दशम, एकादश, चतुर्थ अथवा पंचम में योगप्रद होता है।

व्याख्या - राहु एक छाया ग्रह होने के नाते उस भाव का या उस ग्रह का फल करता है जिससे कि यह सम्बन्धित होता है। एकादश, पंचम में तो इसलिये शुभ होगा कि यह स्थान धनप्रद है । चतुर्थ और

दशम में यह तभी पूर्णतया शुभ होगा जब इस पर किसी केन्द्र भाव के स्वामी का प्रभाव होगा ।

केन्द्राधिपति यस्सौम्य खेटायदि नयोगवाः ।

केन्द्रस्था केन्द्रनावस्तु क्रूराचेद्राजयोगवाः ॥ ६॥

भावार्थ – केन्द्र भावों के स्वामी यदि नैसर्गिक शुभ ग्रह हो तो वे अपनी दशा भुक्ति में शुभ फल नहीं देते, परन्तु नैसर्गिक पापी ग्रह केन्द्र के स्वामी होकर केन्द्र ही में स्थित हों तो राजयोग देते हैं ।

व्याख्या – केन्द्राधिपत्य दोष के सम्बन्ध में पहले श्लोकार्थ में कही बात आरम्भिक ज्ञान की सर्वविदित है। जब नैसर्गिक पापी ग्रह केन्द्र का स्वामी होगा तो वह अपनी नैसर्गिक अशुभता को खो देगा और पुनः केन्द्र में स्थित होकर शुभ फलप्रद हो जावेगा ।

यस्मिन् भावे स्थितो मन्दो य भावं वीजितेयया ।

तस्य तस्यापि भावस्यन्यूनतां च वदन्ति हि ॥ ७ ॥

भावार्थ – जिस किसी भाव पर शनि का युति अथवा दृष्टि द्वारा प्रभाव पड़ता है उस भाव सम्बन्धित बातों में न्यूनता आ जाती है ।

विक्रमं भाग्यराशिश्च शनिना वीक्षितो यदि ।

तस्य भावस्य प्रावल्यमित्यूचुर्गणकोत्तमाः ॥ ८ ॥

भावार्थ – यदि शनि की तृतीय अथवा नवम भाव पर दृष्टि हो तो दृष्टभाव को बल मिलता है।

व्याख्या – साधारण नियम तो यह है कि जिस भाव आदि पर शनि की दृष्टि पड़ेगी उसमें न्यूनता आवेगी । परन्तु यहाँ ग्रन्थकार की सम्मति में तृतीय और नवम भाव पर शनि की दृष्टि इन भावों को बल देगी । यह बात सर्वथा ग्राह्य नहीं हो सकती।

किसी भाव विशेष के लिये जैसे आयु के लिये तृतीय भाव पर शनि की दृष्टि भले ही शुभ हो, क्योंकि तृतीय भाव भी अष्टम की भाँति आयु का भाव है । इसी प्रकार दर्शन शास्त्र की जानकारी के लिये संभवतया शनि की नवम पर दृष्टि शुभ हो ।

क्षीणचन्द्रो विलग्नस्थो मन्दधीरन्यपोषितः ।

पूर्णचन्द्रो विलग्नस्थो गुणवान् धनवान् भवेत् ॥ ९ ॥

भावार्थ – यदि क्षीण चन्द्र (सूर्य से ७२ अंशों के अन्दर अन्दर स्थित) लग्न में हो तो खोटी बुद्धि वाला और दूसरे द्वारा पाला हुआ व्यक्ति होता है, परन्तु यदि लग्न में पूर्ण चन्द्र हो तो जातक गुणवान और धनी होता है ।

व्याख्या – ज्योतिष शास्त्र क्षीण चन्द्रमा को एक पापी ग्रह मानता है । इसका क्षीण होकर लग्न में स्थित होना दो प्रकार से धन आदि की हानि करने वाला होगा। एक तो इसलिये कि पापी चन्द्र द्वारा लग्न पीड़ित होगी और चूंकि लग्न का धन से घनिष्ट सम्बन्ध है लग्न का पीड़ित होना धन की कमी का सूचक होगा। दूसरे, चूंकि चन्द्र स्वयं भी लग्न की भाँति धन आदि गुणों का द्योतक है उसका निर्बल होना धन, मन आदि का निर्बल होना सिद्ध होगा ।

बिलग्नस्थौ चन्द्रभौमो वा मृर्ति भाग्यवान् भवेत् ।

चतुर्थेशयुतो भौमः क्षेत्रवान् भवति ध्रुवम् ॥ १०॥

भावार्थ – यदि चन्द्र और मंगल लग्न अथवा अष्टम भाव में हों तो जातक भाग्यशाली होता है। यदि मंगल चतुर्थ भाव के स्वामी के साथ हो तो जातक जमीन–जायदाद का स्वामी होता है ।

व्याख्या – ऐसा प्रतीत होता है कि ग्रन्थकार इस सिद्धान्त को यहाँ अपना रहा है कि ग्रहों की चन्द्र के साथ स्थिति उनमें शुभता लाती है । यह सत्य है, परन्तु हमारा विचार है कि ऐसी स्थिति में चन्द्र बलवान् होना चाहिये ।

मंगल भूमि का कारक है और चतुर्थ भाव भूमि भाव है, अतः चतुर्थेश का मंगल से मिलना शुभ है। विशेषतया जबकि दोनों पर शुभ प्रभाव हो और उनका सम्बन्ध लग्न अथवा लग्नेश से भी हो ।

चतुर्थनाथ देवेज्यौ य चतुर्थे यदि संस्थितौ ।

चतुष्पाद वृद्वियोगो यमित्याहुर्जातककोविदाः ।। ११॥

भावार्थ - यदि गुरु और चतुर्थ भाव का स्वामी चतुर्थ भाव में हो तो यह योग पशुधन की वृद्धि का सूचक है ।

व्याख्या - चतुर्थ स्थान घर और उसके सुखों से सम्बन्धित है । घर के सुख में पशुधन भी सम्मिलित है, अतः यदि चतुर्थेश के साथ बैठकर गुरु शुभ और बलवान् होता है तो पशु सुख की भी वृद्धि होगी ।

पापमध्यगता भावास्तथा भावेशकारकाः ।

तद्द्भाव भावराशीश कारका दुःखदायकाः ॥ १२ ॥

भावार्थ - यदि कोई भाव, किसी भाव का स्वामी अथवा किसी भाव का कारक पापी ग्रहों के बीच में स्थित हो तो उस भाव, भावेश अथवा कारक के गुणों की हानि होती है ।

व्याख्या - फलादेश कहने के लिये तीन ही मुख्य बातें चाहियें भाव, भावेश और उसका कारक । जब यह तीनों पाप ग्रहों के बीच में होंगे तो स्पष्ट है कि सब बातें दुःखप्रद होंगी ।

लाभग्ययाषिपत्योश्च संबन्धो योगदो भवेत् ।

लाभाधिपस्तृतीये वा व्यये वा योगदो भवेत् ॥ १३ ॥

भावार्थ - यदि बारहवें और ग्यारहवें भावों के स्वामी परस्पर युति आदि से सम्बन्धित हों तो वे योगप्रद अर्थात् शुभ फलदायक होते हैं। ग्यारहवें भाव के स्वामी का तृतीय अथवा द्वादश में बैठना भी शुभ है।

व्याख्या - चूँकि पाराशरीय नियमों के अनुसार द्वादश भाव का स्वामी 'स्थानान्तर' का फल करता है, इसलिये जब एकादशेश और द्वादशेश की युति होगी तो द्वादशेश एकादश भाव का फल करेगा अर्थात् लाभ देगा।

इसी प्रकार जब एकादश (उपचय) का स्वामी एक दूसरे उपचय भाव (तृतीय) में होगा तो उपचय (आय) की प्राप्ति होगी।

एकादश भाव का स्वामी द्वादश में कैसे शुभ फल देगा यह विचारणीय है क्योंकि नियम है कि जिस भाव का स्वामी द्वादश में जाता है उसकी हानि होती है।

सर्वं राशिषु जातस्य भाग्येशोह्यष्टमे यदि ।

न योगं लभते जात सामान्यो भवति ध्रुवम् ॥ १४ ॥

भावार्थ - कोई भी लग्न हो यदि नवमेश अष्टम भाव में स्थित हो तो बहुत शुभ फल की प्राप्ति नहीं होती । साधारण फल मिलता है।

व्याख्या – यह स्थिति भाग्य से द्वादश और लग्न से अष्टम होने के कारण अच्छा फल न देगी, परन्तु गुरु अपवाद है । देखिये तुला लग्न पर प्रथम श्लोक ।

षष्ठस्थो यदि वा चन्द्रो बुद्धिकौशल्यवान् भवेत् ।

द्वितीयस्थो भवेच्चन्द्रः नेत्र चञ्चलवान् भवेत् ।। १५ ।।

भावार्थ – यदि चन्द्रमा छठे भाव में हो तो वह बुद्धि से चतुर होता है । यदि चन्द्रमा द्वितीय भाव में हो तो उसकी आँखें चंचल होती हैं ।

व्याख्या – चन्द्रमा बहुत परिवर्तनशील है और साथ ही आँख का कारक भो, अतः आँख के स्थान में स्थित होकर अपनी चंचलता को आंखों में डालेगा ।

छठे स्थान में चन्द्र बुद्धि को बढ़ाता है यह बात विचारणीय है । क्योंकि छठा स्थान तो अभाव और कमी का है । चन्द्रमा छठे भाव में आ जावे तो आयु कम हो जाती है।

समराश्योजराशीतिश्शास्त्रे तु कथ्यते ।

मेषमारभ्य तत्संख्याज्ञातव्य विबुषोत्तमैः ॥ १६ ॥

भावार्थ – राशियां सम (Even) और विषम (Odd) होती है और मेष राशि से विषम, सम इस क्रम राशि से एक–एक करके गिनी जाती है।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

ग्रहमालिका योग

लग्नादिवाणसंख्याक राशिगा नवखचेरा ।

स्थिताश्चेत्पञ्च खेटाख्य मालिकायोग उच्यते ॥१॥

भावार्थ - यदि सारे ग्रह लग्न से लेकर पाँचवें भाव तक प्रत्येक घर में हों तो 'पंच ग्रह मालिका' योग होता है ।

व्याख्या - मालिका से तात्पर्य माला या हार है। माला की उपमा देने का तात्पर्य यह है कि माला की भाँति कोई भी भाव ग्रहों से खाली न हो। ग्रह मालिका के पीछे क्या सिद्धान्त कार्य कर रहा है यह तो कहीं उल्लिखित नहीं है, परन्तु इन योगों के अध्ययन से ऐसा प्रतीत होता है कि चूंकि ग्रह एक दूसरे के साथ-साथ भावों में हैं उन सबका प्रभाव उस भाव पर पड़ता है जिससे कि उनका आरम्भ हो और योग उतना ही शुभ होगा जितने अधिक ग्रह उसमें भाग ले रहे हों।

उक्त योग चूंकि लग्न से आरम्भ होता है, इसलिये यह योग लग्न सम्बन्धित धन, आयु, यश आदि को बढ़ाने वाला होता है।

लग्नमारभ्यये खेटाः ऋतु संख्य सुराशिषु ।

स्थिताश्चेत्षष्ठ खेटाख्यामालिका योग उच्यते ॥ २ ॥

भावार्थ - यदि सारे ग्रह लग्न से आरम्भ करके प्रत्येक भाव में एक ग्रह करके स्थित ६ भावों में हों तो 'षटमालिका' योग बनता है ।

लग्नामारभ्य शैलाख्य संख्य राशिषु खेचराः ।

स्थितश्चेत्सप्तखंटाख्या मालिका योग उच्यते ॥ ३ ॥

भावार्थ - यदि लग्न से आरम्भ करके सात राशियों में प्रत्येक राशि में एक-एक ग्रह हो तो 'सप्तमालिका' योग होता है।

लग्नमारभ्यवस्वाख्यराशिस्था खेचरा यदि ।

अष्टखेचरमालाख्य योगप्रोक्तस्तु सूरिभिः ॥४॥

भावार्थ - यदि सारे ग्रह लग्न से गिनकर आठ भावों में एक-एक ग्रह एक-एक भाव में हो तो अष्टमालिका योग होता है ।

लग्नादारभ्य भागाख्य संख्यराशिषु खेचराः ।

स्थिताश्चेन्नव खेटाख्या मालिका योग उच्यते ॥ ५ ॥

भावार्थ - यदि सारे ग्रह एक-एक करके लग्न से नवम भाव तक

स्थित हों तो 'नवमालिका' योग होता है ।

व्याख्या - संभवतया मालिका योगों में से यह योग सबसे उत्तम हैं। देखिये श्लोक १ के नीचे की व्याख्या ।

केचिद्वदन्ति सूर्यादि ग्रहाणां क्रमशस्थितिः ।

मालिका ग्रहयोगो ऽयमितिजातककोविदाः ॥ ६ ॥

केचिद्वदन्ति लग्नाधिराशिषु क्रमशो ग्रहः ।

स्थिताश्चेद ग्रहमालाख्य योगीयमिति कोविदाः ॥ ७ ॥

भावार्थ - कुछ लोगों की सम्मति है कि सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि राहु, केतु इस क्रम से यथासंभव स्थित ग्रह मालिका है और लग्न द्वितीय, तृतीय आदि भावों में सूर्य आदि ग्रहों की सूर्य चन्द्र आदि क्रम से स्थिति ग्रह माला योग होता है ।

व्याख्या - यह सम्मति ग्रन्थकार की नहीं है और ऐसी स्थिति भी बहुत कम बन पावेगी ।

षष्ठ सप्ताष्ट नवभि संख्याख्या: ग्रहमालिकाः ।

भवन्ति यस्य जातस्य भाग्ययोगप्रदा स्मृताः ॥ ८ ॥

भावार्थ - ६, ७, ८ अथवा नौ ग्रहों की मालिका से जो योग बने वे योगप्रद होते हैं ।

पञ्चखेटाल्यमालाऽपि यस्य जातस्य विद्यते ।

भाग्योगस्तु वक्तव्यस्तस्य ज्योतिषकोत्तमः ॥ ९ ॥

भावार्थ - जिस जातक के लग्न से लेकर प्रथम पाँच भावों में सारे ग्रह हों पांचों में से कोई भाव खाली न हो तो भी उसको भाग्यशाली समझना चाहिये ।

समाराशिस्थ खेटानां मूलकोरणाधिपत्यजम् ।

फलम तु तदनुचेदितर राशीशतां फलम् ॥ १० ॥

भावार्थ - यदि कोई ग्रह सम राशि में स्थित हो तो उस भाव का फल दशा में पहले करेगा जिसमें कि उसकी मूल त्रिकोण राशि पड़ती है। उसके अनन्तर दूसरी राशि का फल होगा ।

ओजराशिस्थ खेटानामितराधीशतां फलत् ।

त्वग्रे भवति कोणाधिपत्यजं फलमन्यथा ॥ ११ ॥

भावार्थ - जो ग्रह ओज (Odd) राशियों में स्थित होते हैं वे उस भाव का फल पहले करते हैं जो उनकी साधारण राशि होती है। तदनन्तर वे अपनी मूल त्रिकोण राशि का फल करते हैं।

रवेः द्वितीयस्थ खगा शीघ्रः गाश्च भवन्ति हि ।

रवेस्तृतीयस्थ खगा समानगतयो भवन् ॥ १२ ॥

भावार्थ – सूर्य से द्वितीय राशि में स्थित ग्रह शीघ्र गति से चलते हैं। सूर्य से तृतीय राशि में स्थित ग्रह सामान्य (Average) गति से चलते हैं ।

रवेतुर्थस्थ खगाः भवेयुर्मदगामिनः ।

रवेः पञ्चम वष्ठस्थाः भवेयुर्वक्रगास्सदा ॥ १२ ॥

भावार्थ – सूर्य से चतुर्थ राशि में स्थित ग्रह मन्द (Slow) चाल वाले होते हैं। पंचम और छठे जो हों उनमें थोड़ी वक्रता होती है ।

रवेस्सप्तमरन्ध्रस्था ग्रहाश्चात्यन्त वक्रगाः ।

रवेसुधर्मकर्मस्थ । ग्रहाणां कुटिलागतिः ॥ १४ ॥

भावार्थ – ग्रह जब सूर्य से सप्तम तथा अष्टम स्थान में होता है तो बहुत वक्री होता है। जब ग्रह सूर्य से नवम अथवा दशम हों तो कुटिल गति वाला कहलाता है।

रवेर्लाभ व्ययस्थाश्च ग्रहश्चात्यन्त शीघ्रगाः ।

शुभग्रहाणां शीघ्रगतयो बलहीनदाः ॥ १५ ॥

भावार्थ – सूर्य से एकादश और द्वादश स्थान में स्थित ग्रह बहुत शीघ्र (Abnormal Speed) गति से चलते हैं। शुभ ग्रह यदि शीघ्र गति में हों तो उनकी शुभता जाती रहती है ।

क्रूर ग्रहाणां वक्रतयश्शुभयगदाः ।

इत्येवं हि ग्रहगतीद्रष्टव्या गणिकोत्तमः ॥ १६ ॥

भावार्थ – क्रूर ग्रहों का वक्री होना शुभ फल देता है ।

व्याख्या – हमारा विचार है कि जब कोई ग्रह शीघ्र गति से चल रहा होता है तो वह अपने सन्तुलन को खो बैठता है चाहे वह नैसर्गिक शुभ ग्रह हो अथवा नैसर्गिक पापी और चाहे वह किसी भी भाव का स्वामी हो।

इसी प्रकार हमारा विचार है कि जब कोई ग्रह वक्री होता है तो वह बलवान् हो जाता है। चाहे किसी भी राशि में स्थित हो, चाहे वह नैसर्गिक शुभ हो अथवा अशुभ, चाहे उसका आधिपत्य शुभ हो अथवा अशुभ।

वक्री ग्रह मन्द गति में होता है और सूर्य से दूर होने के कारण रश्मियों से युक्त होता है, इसलिये वक्री ग्रह जिस भाव का स्वामी है अथवा जिस बात का कारक है दोनों बलवान् हो जाते हैं । फल तो ग्रह की शुभता अथवा अशुभता पर ही निर्भर करता है ।

उदाहरणार्थ – जब पंचम भाव और उसका स्वामी दोनों निर्बल और पीड़ित हों, परन्तु गुरु वक्री हो और उस पर स्त्री ग्रहों का प्रभाव न हो तो गुरु कारकत्व द्वारा पुत्रों की प्राप्ति करवाता है ।

ग्रहों का आधिपत्य आदि

सूर्य

उच्चस्थानं रवेमेषं वृषभे तु द्विषद्गृहम् ।

मिथुन तु समक्षेत्रं मित्रक्षेत्रकुळीरकम् ॥ १॥

भावार्थ – सूर्य की मेष 'उच्च' राशि है, वृषभ शत्रु राशि है, मिथुन सम है और कर्क मित्र राशि है ।

स्वक्षेत्रं मूलकोणं च सिप्रोक्तस्तु सूरिभिः ।

कन्याभं तु समक्षेत्रं तुलानीचारि मन्दिरम् ॥२॥

भावार्थ – सूर्य की सिंह स्वराशि भी और मूल त्रिकोणराशि भी है । कन्या सम है, तुला उसके लिये शत्रु और 'नीच' राशि है ।

मित्रक्षेत्र कीटधनुषी मकरं स्याद्विषद्गृहम् ।

कुम्भोऽपि शत्रुक्षेत्रञ्च मित्रक्षेत्रस्तु मीनभम् ।

रवेर्प्रहाणां गणनात्वेवं प्रोक्ताच सूरिभिः ॥३॥

भावार्थ – सूर्य के लिये वृश्चिक और धनु मित्र राशियाँ हैं, मकर और कुम्भ शत्रु राशियाँ हैं और मीन मित्र राशि है।

चन्द्रमा

विधोरजा समक्षेत्रमुखस्थानं वृपस्तथा ।

मूलकोणं तथा प्रोक्तं मित्रक्षेत्रं तु युग्मभम् ॥४॥

भावार्थ – चन्द्रमा के लिये मेष सम राशि है, वृषभ उसकी उच्च राशि है और मूल त्रिकोण राशि भी, मिथुन सम है ।

कर्कटं तु स्वभवनं मित्रक्षेत्रं तु सिंहभं ।

कन्यामित्रं तस्य भवनं तुला समगृहं भवत् ॥५॥

भावार्थ – चन्द्रमा की कर्क अपनी राशि है, सिंह उसकी मित्र राशि है, कन्या भी मित्र है और तुला सम है ।

वृश्चिकं तु समक्षेत्रं नीचरशिरपिस्मृता ।

शरासनम् समगृहं मकरस्समगृहं भवेत् ॥६॥

भावार्थ - चन्द्रमा की वृश्चिक राशि सम है और साथ ही नीच भी है । धनु सम है, मकर भी सम है ।

कुम्भर्क्षं तु समक्षेत्रं मीनस्स्यान्सम मन्दिरम् ।

विधोर्ग्रहाणां गणनात्वेवं प्रोक्ताच सूरिभिः ॥७॥

भावार्थ - इसी प्रकार चन्द्र के लिए कुंभ और मीन राशियां सम राशियाँ कही हैं।

मंगल

कुजस्य मेषं स्वक्षेत्रं मूलकोणं तथैव च ।

वृषभं शत्रुभवनं मिथुनं त्वरिमन्दिरम् ॥८॥

भावार्थ - मेष राशि मंगल की अपनी राशि है और साथ ही उसकी मूल त्रिकोण राशि भी, वृषभ शत्रु क्षेत्र है, मिथुन भी शत्रु राशि है ।

कर्कटं नीच राशिश्च मित्रक्षेत्रमुदाहृतम् ।

सिंह मित्रभवनम् कन्या शत्रुगृहं भवेत् ॥ ९ ॥

भावार्थ – कर्क नीच परन्तु मित्र राशि है, सिंह मित्र है, केन्या शत्रु राशि है।

तुला शत्रुगृहंप्रोक्तं वृश्चिक स्वगृहं भवेत् ।
धनुमित्रगृहंप्रोक्तं मकरं शत्रुमन्दिरम् ॥१०॥

भावार्थ – मंगल के लिये तुला शत्रु क्षेत्र है, वृश्चिक उसकी अपनी राशि है, धनु मित्र और मकर शत्रु गृह है।

मकरंचोच्च राशिस्यत्कुम्भशत्रु गृहं भवेत् ।
मीनंतु मित्रक्षेत्रंस्यात्कुजस्यैव वदन्तिः हि ॥ ११॥

भावार्थ – मकर इसकी उच्च राशि है और कुम्भ शत्रु राशि और मीन मंगल के लिये मित्र राशि है ।

बुध

बुधस्यजा समक्षेत्रं वृषोमित्रगृहं भवेत् ।

मिथुन स्वगृहं प्रोक्तं कर्कटं तु द्विषद् गृहं ॥ १२ ॥

भावार्थ – बुध के लिये मेष सम राशि है, वृषभ मित्र है, मिथुन अपना घर है और कर्क शत्रु राशि है ।

सिंहर्क्ष मित्रभवन कन्या स्वक्षेत्रमुच्यते ।

मूलकोणंतुच्चराशि: कन्या सौम्यस्ययोगदा ॥ १३॥

भावार्थ – सिंह मित्र राशि, कन्या निज क्षेत्र है, मूल त्रिकोण भी है और उच्च राशि भी है । यह राशि बुध के लिये बहुत शुभ है ।

तुलामित्र गृहं प्रोक्तं वृश्चिकं सममन्दिरम् ।

धनुर्मृगी समक्षेत्रं कुम्भक्षं सममन्दिरम् ॥ १४॥

भावार्थ – बुध के लिये तुला मित्र राशि है, वृश्चिक सम है । धनु मकर और कुम्भ राशियाँ सम राशियाँ हैं ।

मीने समगृहं प्रोक्तं नीचराशिस्तथा भवेत् ।

बुधस्य गृहगणनात्वेवं प्रोक्ता तु सूरिभिः ॥ १५॥

भावार्थ - बुध के लिये मीन सम राशि भी और उसकी नीच राशि भी है ।

गुमेवं मित्रगृहं वृषभस्त्वरिमन्दिरम् ।

मिथुनं शत्रुभवनमुच्चस्थानं तु कर्कटम् ॥१६॥

भावार्थ - गुरु के लिये मेष मित्र भवन है, वृषभ शत्रु राशि, मिथुन भी शत्रु, कर्क गुरु की उच्च राशि भी है और मित्र भी ।

तदेव मित्रभवनं सिंहभं मित्रमन्दिरम् ।

कन्या तुले शत्रुगृहे वृश्चिकं मित्रमन्दिरम् ॥१७॥

भावार्थ - सिंह राशि मित्र राशि है, कन्या और तुला शत्रु राशियाँ हैं, वृश्चिक मित्र राशि है ।

धनुस्थानं मूलकोणं स्वक्षेत्रचामिषीयते ।

मकरं नीचराशिनु समक्षेत्रमुदाहृतम् ॥१८॥

भावार्थ - धनु राशि गुरु की स्वक्षेत्र भी है और मूल त्रिकोण भी, मकर उसके लिये सम भी है और नीच राशि भी ।

कुम्भराशि समक्षेत्रं मीनं स्वभवनं भवेत् ।

गुरी गृहाणां गणनात्वेवं प्रोक्ता तु सूरिभिः ॥ १९ ॥

भावार्थ - गुरु के लिये कुंभ सम राशि है और मीन उसका अपना घर है ।

शुक्र

भृगोमेषं समक्षेत्रं वृषभं स्वस्य मन्दिरम् ।

मिथुनं मित्रभवनं कर्कटं त्वरिमन्दिरम् ॥२०॥

सिहक्षं शत्रुभवनं कन्यानीचं सुहृद्गहम् ।

स्वक्षेत्र मूलकोणं च तुलाप्रोक्ता भृगोस्तथा ॥ २१॥

भावार्थ – शुक्र के लिये मेष सम राशि है, वृषभ उसकी अपनी राशि है, मिथुन मित्र राशि है, कर्क शत्रु राशि ।

वृश्चिकं तु समक्षेत्रं धनुस्त्वरिगृहं

मकरं मिनभवनं कुम्भस्तु सुहृदो गृहम् ॥२२॥

भावार्थ – वृश्चिक शुक्र का सम भवन है और धनु शत्रु राशि है, मकर मित्र राशि है और कुम्भ मित्र राशि है।

मीनर्क्षं उच्च तु राशिस्याच्छतुक्षेत्रं तथैव च ।

भृगोगृहाणां गणनात्वेवं प्रोक्ता च सूरिभिः ॥ २३॥

भावार्थ – शुक्र की मीन राशि उच्च राशि है और शत्रु राशि भी ।

शनि

शमेर्मेषो नीचराशि शत्रुक्षेत्रमुदाहृतम् ।

वृषभं मिथुने चैव मित्रमुदाहृतम् ॥२४॥

भावार्थ – शनि की मेष नीच राशि है और शत्रु राशि भी है। वृषभ और मिथुन मित्र क्षेत्र हैं।

कर्कटं शत्रुभवनं सिह शत्रुमन्दिरम् ।

कन्यामित्र गृहतौलितञ्चराशि सुहृद्गृहम् ॥२५॥

भावार्थ – कर्क इसका शत्रु भवन है और सिंह भी । कन्या मित्र राशि है, तुला शनि की उच्च राशि भी है और मित्र राशि भी ।

वृश्चिकं शत्रुभवनं धनुस्समगृहं भवेत् ।

मकरं स्वभवनं कुम्भः स्वागारं मूलकोणकम् ॥२६॥

भावार्थ – वृश्चिक शत्रु राशि है, धनु सम राशि है, मकर निज राशि है,

मकर निज राशि भी है और मूल त्रिकोण राशि भी ।

मीनक्षेतु समक्षेत्रमित्येवं निर्णयः ॥ २७ ॥

भावार्थ - मीन राशि शनि के लिये सम है ।

राहु

वृषभस्तूच्चराशिराहो प्रोक्ते तु सूरिभिः ।

मिथुनं कर्कटं चैव मूलकोणमिति श्रुतम् ॥ २८ ॥

भावार्थ - राहु के लिये वृषभ उच्च राशि है, मिथुन और कर्क मूल त्रिकोण राशियां हैं। वृषभ मित्र राशि है ।

वृषभं मित्रभवनं कन्या स्वभवनं भवेत् ।

उच्चस्थानस्थ राहोस्तु दायकालो हि राजदः ॥ २९ ॥

भावार्थ - कन्या निज भवन है । राहु अपनी उच्च राशि में स्थिति हो तो अपनी दशा में राज्य देता है ।

केतु

केतो स्वभवनं मीनतुला मित्रस्य मन्दिरम् ।

कुम्भकीटेतूच्चराशि मूलकोणौ धनुमृगौ ॥३०॥

भावार्थ – केतु के लिये मीन निज राशि है, तुला मित्र राशि, कुम्भ और वृश्चिक उसकी उच्च राशियां हैं। इसकी मूल त्रिकोण राशियां धनु और मकर हैं।

पंडित अजय शर्मा (जन्मपत्री विशेषज्ञ)

मो. 7234923855

आप मुझे जन्मपत्री दिखाने, उपाय जानने, सलाह लेने के लिये मेरे मोबाईल पर सम्पर्क कर सकते हैं। आप हमें नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके मेरी वेबसाईट, फेसबुक, यूटयूब पर मुझे फालो कर सकते हैं।

Website : https://jyotishastrology.in/

Facebook : https://www.facebook.com/jyotishastrology.in/

You Tube : https://www.youtube.com/@jyotish-astrology

नियम अध्याय

नियम १ : जिन भावों के स्वामी उन भावों के कारकों के साथ संयुक्त
हों, उनकी वृद्धि होती है। (अध्याय १२, श्लोक १)

नियम २ : कोई भी कारक ग्रह यदि उस भाव में स्थित हो जिसका कि वह कारक है तो उस भाव का बहुत थोड़ा फल मिलता है। (अध्याय २, श्लोक १) इस सन्दर्भ में अध्याय ४ का श्लोक २ भी देखिये जहां गुरु को चतुर्थ भाव के सम्बन्ध में एक अपवाद बताया गया है।

नियम ३ : वह भाव जिसका कारक लग्न से द्वादश भाव में स्थित हो, फलता फूलता है। (अध्याय ८ श्लोक ६)

नियम ४ : यदि किसी केन्द्र का स्वामी नैसर्गिक पापी ग्रह हो और वह क्रेन्द्र ही में स्थित हो तो राजयोग का शुभ फल करता है। (अध्याय १२, श्लोक ६)

नियम ५ : जो ग्रह अष्टम भाव में स्थित हो वह उस भाव से सम्बन्धित बातों को, जिसका कि वह स्वामी है, हानि पहुंचाता है और साथ ही अपने कारकत्व को; परन्तु शनि इस नियम में अपवाद है। अष्टम भाव में शनि अच्छी आयु देता है । (अध्याय ७, श्लोक ३)

नियम ६ : शुक्र द्वादश अथवा छठे स्थान में स्थित होकर भी शुभ फल करता है। (अध्याय १२, श्लोक ४)

नियम ७ : जो ग्रह अपनी दोनों राशियों से बुरे भावों में स्थित होता है उन भावों के लिए अशुभ फल करता है। (अध्याय १, मेष लग्न, श्लोक १३)

नियम ८ : जो ग्रह दो भावों का स्वामी होता है वह उस भाव का फल करता है जिसमें कि उसकी मूल त्रिकोण राशि होती है। (अध्याय १, कर्क लग्न, श्लोक १)

नियम : नैसर्गिक शुभ ग्रह जब द्वितीय और द्वादश भावों के स्वामी हों तो मारक होते हैं। (अध्याय १, श्लोक १)

नियम १० : यदि दो ऐसे ग्रहों की युति हो जो किसी साझी बात के द्योतक हैं तो वह साझी बात फलीभूत होती है। (अध्याय १, वृश्चिक लग्न, श्लोक १)

नियम ११ : जब दो से अधिक ग्रहों का परस्पर सम्बन्ध हो तो कोई एक ग्रह अपनी दशा भुक्ति में उन गुणों की अभिव्यक्ति करेगा जो उन ग्रहों में साझे हैं जोकि इसे प्रभावित कर रहे हैं। (अध्याय १, धनु लग्न, श्लोक ३)

नियम १२ : यदि कोई ग्रह किसी लग्न विशेष के लिए योग कारक ह परन्तु दिक् बल से शून्य हो तो ऊंचा फल न करेगा । (अध्याय १, मकर लग्न, श्लोक ३)

नियम १३ : ग्रह उस भाव का मुख्यतया फल करते हैं जिसमें कि उन की मूल त्रिकोण राशि पड़ती है। (अध्याय १, मीन लग्न, श्लोक ८)

नियम १४ : द्वादश भाव का स्वामी कमी (अल्पता) का सूचक है ।
यदि यह धन द्योतक ग्रहों के साथ हो तो धन को घटा देता है। (अध्याय २, श्लोक ५; श्लोक २, अध्याय २)

नियम १५ : दो ग्रह धनादि साझे गुणों वाले यदि परस्पर सम्बन्ध न भी रखते हों, परन्तु यदि वह अपने-अपने भावों में स्वक्षेत्री होकर बलवान्
हों तो शुभ फल करते हैं । (अध्याय २, श्लोक २)

नियम १६ : विद्या का मुख्य स्थान द्वितीय भाव है जिसके द्वारा विद्या की मात्रा आदि का विचार करना चाहिए। (विद्या शीर्षक में श्लोक ३, ४, ७ से १०)

नियम १७ : कुण्डली का चतुर्थ स्थान 'जनता' का और स्त्री जाति का भाव होने से जनता की स्त्री का प्रतिनिधित्व करता है । यदि चतुर्थेश का सम्बन्ध सप्तम सप्तमेश से हो तो मनुष्य व्यभिचारी होता है ।

(अध्याय ६, श्लोक २२)

नियम १८ : जब दो ग्रह एक स्थान में हों तो वे अपनी दशा भुक्ति में साथी ग्रह का बहुत हद तक फल करते हैं ।(सिंह लग्न, श्लोक ७)

भावार्थ रत्नाकर

आप नीचे दिये गये लिंक को क्लिक करके इस पुस्तक के आनलाईन संस्करण को भी पढ सकते है ।

1. मेष लग्न | वृश्चिक लग्न
2. वृषभ लग्न | तुला लग्न
3. मिथुन लग्न | कन्या लग्न
4. कर्क लग्न | सिंह लग्न
5. धनु लग्न | मीन लग्न
6. मकर लग्न | कुंभ लग्न
7. अध्याय 2 | धन योग | विद्या | खान-पान
8. अध्याय 3 भ्रातृ-भाव |अध्याय 4 वाहन तथा भाग्य | अध्याय 5 शत्रु और रोग
9. अध्याय 6 स्त्री और काम | अध्याय 7 आयु और स्वास्थ्य
10. अध्याय 8 भाग्य योग | अध्याय 9 राज योग
11. अध्याय 10 तीर्थ स्नान | अध्याय 11 मृत्यु योग
12. अध्याय 12 दशा के परिणाम
13. अध्याय 13 साधारण योग | अध्याय 14 ग्रहमालिका योग | अध्याय 15 ग्रहों का आधिपत्य आदि
14. नियम अध्याय

Bhavarth Ratnakar Hindi Pdf Free Download

Bhavarth Ratnakar Hindi Men Pdf Free Download

Bhavarth Ratnakar in Hindi Pdf Free Download

भावार्थ रत्नाकर हिन्दी में free PDF Download